ओ३म्

गुरु ग्रन्थ का वैदिक पन्थ

अर्थात

खालसा ज्ञान प्रकाश

गुरु विरजानन्द आर्ष
सन्दर्भ पु 5/08
परिग्रहण क्रमांक
महाविद्यालय

स्वामी अमृतानन्द जी सरस्वती

विषय सूची

श्लोक सूची गुरू ग्रन्थ	(क)
प्रथम प्रवचन	१
विचार आरम्भ	४
संसार का एक धर्म	
ओंकार महिमा विचार	१७
ईश्वर महिमा विचार	२२
ईश्वर दयालु और न्यायकारी है	३१
ईश्वर निराकार है या साकार	३६
ईश्वर सर्व शक्तिमान है	३८
स्तुति, प्रार्थना, उपासना	४१
सृष्टि कर्ता परमेश्वर	४४
ईश्वर अवतार (४५) मूर्ति पूजा	४८
ईश्वरी ज्ञान वेद (५५) पाप क्षमा	६७
ईश्वर और जीव का स्वरूप	७०
तीन अनादि पदार्थ (७३) सत्गुरू	७६
कर्म फल तथा पुनर्जन्म (८५) करामात	६०
वर्ण आश्रम धर्म	६४
सन्धया व ब्रह्म यज्ञ	६६
देव यज्ञ या हवन	६८
अतिथि यज्ञ या साधु सेवा	१०५
पितृ यज्ञ या श्राद्ध तर्पण	१०८
मांस शराब नशे खण्डन	११०
वैदिक संस्कृति के तीन प्रतीक	१२०
१) ओ३म् २) आर्य (१२१) ३) नमस्ते	१२५
संक्षेप से	१२६

बेद बयाखयान करत साधू जन,
भाग्य हीन समझत नहीं खलु ॥
(टोडी म० ५)

गुरु ग्रन्थ का वैदिक पन्थ

अर्थात

खालसा ज्ञान प्रकाश

लेखकः—स्वामी अमृतानन्दजी सरस्वती

प्रकाशक—
स्वामी आत्मा नन्द प्रकाशन मन्दिर
वैदिक साधन आश्रम यमुना नगर
(अम्बाला)

मूल्य 75 पैसे

मानुख की टेक बृथी सभ जान ॥
देवन को एकै भगवानु ॥ (सुखमनी)

मन अपुने ते बुरा मिटाना, पेखै सगल सृष्टि साजना (सुखमनी)

ਸਭੁ ਪੁਰਾਣਾ ਨਾ ਥੀਐ, ਨਾਮੁ ਨ ਮੈਲਾ ਹੋਇ (ਸਲੋਕ ਮ: ੩)

नम्र निवेदन

श्री पूज्य स्वामी अमृतानन्द जी सरस्वती ने यह पुस्तक जिस परिश्रम से खोज पूर्ण लिखी है वह तो पाठक पढ़ने पर जान ही लेंगे।

मेरा तो केवल यही निवेदन है कि मैंने जहां तक हो सका है, गुरू ग्रन्थ तथा दशम पातशाही आदि ग्रन्थों के प्रमाण मूल ग्रन्थों से शुद्ध करके छापे हैं मैंने अपना पूरा यत्न किया है! फिर भी मनुष्य से भूल होनी सम्भव है यदि कहीं भूल से संशोधन में अथवा छपने में कहीं कोई अशुद्धि रह गई हो तो उसके लिये मैं क्षमा याचना चाहता हूं।

गुरू ग्रन्थ सफरी जिसके १४३० सफे हैं उसका सफा तथा पंक्ति, राग और महला आदि सब श्लोक सूची में दे दी हैं। वचित्र नाटक का भी सफा आदि जो दिया है वह जो शरोमणि कमेटी अमृतसर का छपा है उसके हैं ताकि पठकों को मूल ग्रन्थ में ढूडने में सुभीता हो।

पुस्तक अत्यन्त प्रशंसनीय है।

सेवक—

२५—३—६५ मथुरा दास—मुद्रक

दयानन्द पाली टैक्निक इन्स्टीच्यूट

अमृतसर

आर्य जगत की सेवा में

आप इस पुस्तक को इस का पहला भाग ही समझें यदि आर्य जनता ने इस को अपनाया और इसको सिख विद्वानों के हाथ पहुंचाया तो हमारा उत्साह बढ़ेगा और हम इसका दूसरा भाग भी शीघ्र प्रकाशित करा देंगे। भाव यह है कि लेखक को सिख साहित्य की जितनी जानकारी है वह इसको आर्य जनता के हाथों में पहुँचाना चाहते हैं ताकि ऋषि ऋण से मुक्त हो सकें क्योंकि आयु का कुछ भरोसा नहीं।

(स्वामी) अमृतानन्द सरस्वती

दयानन्द इन्डस्ट्रीयल स्कूल प्रैस कटड़ा शेर सिंह
अमृतसर में श्री मथुरादास जी के प्रबन्ध में छपी

शुभ चिन्तकों की सेवा में

श्री स्वामी आत्मानंद प्रकाशन विभाग की प्रचार योजना को सफल बनाने के लिये आप निम्न प्रकार से हमें सहयोग देकर अपना कर्तव्य पालन करें।

१—प्रकाशन के होता सदस्य बनिये और बनाईये, अपना नाम दानियों में छपा कर अपने दान से पुस्तकें प्रकाशित करवाईये, ताकि प्रकाशन का क्षेत्र बढ़ता जाये।

२—प्रकाशन का सस्ता साहित्य खरीदिये और दूसरों को खरीदने की प्रेरणा करिये।

३—शुभावसरों तथा परितोषिक आदि के अवसर पर प्रकाशन की पुस्तकें उपहार में दीजिये।

४—प्रकाशन के स्थाई ग्राहक बनिये और बनाईये।

५—जिस पुस्तक को आप प्रचारार्थ उपयोगी समझें प्रति प्रकाशनार्थ हमें दीजिये।

६-हमारी तीन इच्छाएं:—

(१) वेद को विश्व धर्म बनाना।

(२) वेद का संदेश अधिक सज्जनों तक पहुंचाना।

(३) सार्वभौम आर्य विचार धारा का प्रचार करना।

निवेदक—(स्वामी) अमृतानन्द सरस्वती

प्रबन्धक—

श्री स्वामी आत्मानन्द प्रकाशन

वैदिक साधन आश्रम

यमुनानगर, (अम्बाला)

श्लोक सूची गुरु ग्रन्थ साहिब

(यह श्लोक सूची जिस में पन्ना तथा पंक्ति गुरु ग्रन्थ साहिब की दी गई है यह "गुरु ग्रन्थ साहिब सफरी" जिस के १४३० पेज हैं उस में से हैं। अन्तम पेज नं: इस पुस्तक का है।)

पन्ना श्लोक राग आदि	पन्ना गु: ग्रन्थ	पंक्ति	पेज
गाविये सुनिये मन रखिये (जपजी)	२	१०	५
आदि सच जुगादि सच (जपजी)	१	१	५
अगम अगोचर रूप न(बलावल म० १)	८३८	२६	७
सरब निवासी सदा अलेपा(सोरठ म० ५)	६१७	८	७
बलिहारी कुदरत वसिआ(आसा म० १)	४६६	१४	८
सगल प्राध देही लौरानी(भैरों म० १)	११३६	८	१०
थाप्या न जाए कीता न होए(जपजी)	२	६	१०
रूप न रेख न रंग किछ, (सुखमनी म०५)	२८३	२३	१०
एक ओंकार हमारा खाविन्द —	—	—	२१
परमेसर ते भुलियां(बारां माह माझ म० ५)	१३५	७	२२,६७
प्रीति लगी तिस सच सियों(सिरी राग म० ५)	४६	२४	२४
भाई रे मति करो प्रभु सोई ,, ,, ,,	४६	२७	२४
दाना दाता सील वन्त निर्मल ,, ,, ,,	४७	१	२४
जिस पेखत किल विख हरे ,, ,, ,, ,,	४७	४	२४
वासु देव सर्वत्र में(बावन अखरी म० ५)	२५६	२३	२७
सगल वनस्पति मैं बैसन्तर(सोरठ म० ५)	६१७	४	२७
हर जीऊ अन्तरजामी जान(सारंग म० ५)	१२०२	२५	२८
हुकमे अन्दर सभ को(जपजी)	१	६	२८
रंक राओ जा के एक समान(गौड़ म० ५)	८६३	१६	३२

पन्ना श्लोक राग आदि	पन्ना गु: ग्रन्थ	पंक्ति	पेज
सरब जिया सिर लेख (सोरठ म० १)	५९८	२६	३२
आपे बीजि आपे ही खाह(जपजी)	४	१६	३३
चंगयाइया बुरयाइया वाचे धर्म(जपजी)	८	१४	३३
लेख न मिटई पूर्व कमाइया(धनासरी म० १)	६८६	६	३४
जो जो नाम जपे अपराधी(मारू म० ४)	९९५	६	३४
पढ़ सुआ गनका उधरी ——	—	—	३५
पूर्ण पूरि रहयो दिन राती(मारू म० ५)	१०८६	७	३६
मरै न विनसै आवै (गौड़ी सुखमनी म० ५)	२७६	८	३६
अलख अभेव पुरुंख परताप („)	२८२	३	३७
सरब कला भरपूर प्रभ („ „ „)	२८२	१२	३७
सो अन्तर सो बाहर अनन्त („ „)	२६३	२६	३७
आपेही प्रभ राखता (बलावल म० ५)	८१७	१८	३८
हिरदै कपट नित कपट (सारंग म० ४)	११६६	१६	४२
रूप न रेख न रंग(गौड़ी सुखमनी म० ५)	२८३	२३	४३
जदहों आपे थाट (वार विहागड़ाम० ४)	५५१	६	४४
एकम एकंकार निराला(बलावल म० १)	८३८	२५	४६
खिन मैं भैयान रूप (भैरों म० ३)	११३३	१३	४७
पार ब्रह्म पूर्ण ब्रह्म गुरु नानक देव	—	—	४७
गुरु नानक देव गोबिन्द(बसन्त म० ५)	११६२	१७	४७
काम क्रोध अरु लोभ(गौड़ी सुखमनीम० ५)	२६६	१६	४६
देवी देवा पूजिये भाई(सोरठ म० १)	६३७	६	५०
अन्धे गुंगे अंध अंधारु(बार विहागड़ी म० १)	५५६	१३	५०
भरमि भूले अज्ञानी (मलार म० ४)	१२६४	३	५०
जहां जाइये तह जल(बसन्त रामानन्द)	११६५	१८	५१
सिव सक्ति आपि(रामकली आनन्द म० ३)	६२०	१५	५६

पन्ना श्लोक राग आदि	पन्ना गु: ग्रन्थ	पंक्ति	पेज
सबद सूर जुग चारे (रामकली म० १)	६०८	१०	५६
सबद दीपक वरतै(धनासरी म० ३)	६६४	५	५६
हरि सिमरण कर (गौड़ी सुखमनी म० ६)	२६३	२१	५७
सब नाद बेद गुरबाणी(रामकली म० १)	८७६	१३	५८
गुर के सबद तरे सुनि (भैरों म० १)	११२५	८	५८
भाई रे गुरु बिन ज्ञान न होई(श्रीराग म० १)	५६	१०	५८
नौ;सत चौदह,(बसन्त हिंडोल म० १)	११६०	२३	५६
ओंकार ब्रह्मा उत्पति(रामकली म० १)	६२६	२६	६०
चौथी उपाए चारे बेदा(बलाबल म० १)	८३६	१०	६१
चचे चार वेद जिन साजे(आसा म० १)	४३२	२६	६१
ओंकार उत्पाती ॥ (मारू म० ५)	१००३	२३	६१
हरि आज्ञा होए बेद(मारू म० ५)	१०६४	१६	६१
चारे वेद होए सचियार(आसा म० १)	४७०	११	६२
माईया माई त्रै गुण (मारू म० ३)	१०६६	१	६२
दीवा बले अन्धेरा जाए(सूही म० १)	७६१	३	६२
वेद पाठ संसार की कार(सूही म० १)	७६१	४	६२
असंख ग्र·थ मुख वेद पाठ(जपजी)	३	२६	६३
बाणी ब्रह्मा बेद धर्म दृढ़ो(सूही म० ४)	७७३	२३	६३
वेदा में नाम उत्तम(रामकली म० ३)	६१६	१८	६३
वेद व्याख्यान करत साधु जन(टोडी म० ५)	७१७	१०	६३
चार पुकारह न तू (रामकली म० ५)	८८६	५	६४
वेद पुराण जासु गुण गावत(गौड़ी म० ६)	२२०	२०	६४
वेद पुराण पढ़े को एह गुण (" ")	२२०	६	६४
कल में एक नाम कृपा (सोरठ म० ६)	६३२	१८	६४
वेद पुराण स्मति के मति सुन (,, ,,)	६३३	१	६४

पन्ना श्लोक राग आदि	पन्ना गु: ग्रन्थ	पंक्ति	पेज
वेद कतेब कहो मत झूटे(प्रभाती कबीर जी)	१३५०	६	६५
जाके निगम दूध के ठाटा(सोरठ कबीर जी)	६५५	६	६६
सब को आखै आपना (आसा म० १)	४७३	१६	६८
नानक अगै सो मिलै (,, ,, ,,)	४७२	११	६८
जित कीता पाइये आपना (आसा म० २)	४७४	६	६८
आपे वीजि आपे ही खाह (जपजी)	४	१६	६६
धन धन राजा जनक है	—	—	६६
गौतम नारी अहलिया(मालीगौड़ी नामदेव)	६८८	२१	६६
मेरी मेरी करि बिललाही(गौड़ी म० ५)	१८८	१६	७१
ओह वैरागी मरे न जाए(आसा म० ५)	३६०	२६	७१
तू पूरा हम ऊरे होछे(सोरठ म० ५)	५६७	१	७२
संजोग विजोग दुई कार चलावह(जपजी)	६	२७	७२
एका संगत इकत ग्रह (गौड़ी पूर्वी म० ५)	२०५	२	७३
१ ओंकार सतनाम करता पुरख(जपजी)	१	१	४१, ७५
पांच तत को तन रचियो(श्लोक म० ६)	१४२६	२१	७७
माटी एक सगल संसारा(भौरों म० ३)	११२८	५	७८
गुर बिन ज्ञान न होई(सोरठ म० ३)	६५०	६	७६
नदरि करे जे आपनी(वार आसा म० १)	४६५	२	८१
नानक अंधा होय के दसे(वार माझ म० १)	१४०	१८	८२
अंधे गुरु ते भरम न जाई(गौड़ी म० ३)	२३२	२	८२
गुरु जिनां का अंधुला(रामकली म० ३)	६५१	६	८२
हुकमी ऊत्तप नीच (जपजी)	१	७	८७
नानक औगुण जेतड़े(सोरठ म० १)	५६५	८	८८
जैसा करे सु तैसा पावे(धनासरी म० १)	६६२	१०	८८
मंदा चंगा आपना(आसा म० १)	४७०	२७	८८

श्लोक राग आदि	पन्नागु: ग्रन्थ	पंक्ति	पेज
लेख न मिटई पूर्व (धनासरी म० १)	६८६	६	८८
कई जनम भए कीट (गौड़ी गुआरेरी म० ५)	१७६	१४	८८
राम दास सरोवर नाते (सोरठ म० ५)	६२५	२३	८६
करण कारण प्रभु एक(गौड़ी सुखमनी म० ५)	२७६	२४	६१
मेरी बांधी भगत छुड़ावे(सांरग नाम देव)	१२५२	२६	६१
कबीरा सो नर अन्ध हैं — — —	—	—	६१
नानक सा करमात साहिब(आसा म० २)	४७५	१	६२
बाभों सचे नाम दे होर करामात — —	—	—	६२
ब्राह्मण खत्री सूद वैस(गौड़ म० ४)	८६१	११	६५
खत्री ब्रह्मण सूद वैस(मारू म० ५)	१००१	१७	६५
सो ब्रह्मण जो ब्रह्म वीचारे(धनासरी म० १)	६६२	२०	६५
सो ब्राह्मण ब्रह्म जो बिन्दे(श्री राग म० ३)	६८	३	६६
सो ब्रह्मण जो बिन्दे ब्रह्म श्लोक वारां (तेवधीक म० १)	१४११	२२	६६
कहे कबीर जो ब्रह्म वीचारै(गौड़ीं कबीर)	३२४	२७	६६
एहो सन्ध्या परबान है(वहागड़े की वार म० ३)	५५३	१७	६७
तित घीये होम जग सद पूजा(वार माझ म०१)	१५०	८	६६
होम जग उरध तप पूजा(प्रभाती म० ५)	१३४६	१	१००
सच्ची संगत सच मिले(वार वडहंस म० ३)	५८६	१४	१०५
भलके उठ प्राहुना मेरे(गौड़ी की वार म० ५)	३१८	७	१०६
संतन मो को पूजी सौंपी(सोरठ म० ५)	६१४	८	१०६
चरन साधके धोए धोए पिओ(सुखमनी म०५)	२८३	६	१०७
घोली गेरू रंग चढ़ाइया(मारू म०५)	१०१२	२६	१०७
आया गया मोया नाओं(वार माझ म० १)	१३८	१	११०

श्लोक राग आदि	पन्नागु:	ग्रन्थ	पंक्ति	पेज
जीवत पितर न माने कोऊ(गौड़ी कबीर)	३३२		१४	११०
कोटि पतित जाके संग उधार(गौड़ी म० ५)	८६३		२७	१११
ना को वैरी न ही बिगाना(कानड़ा म० ५)	१२६६		२२	१११
कलि होई कुत्ते मुही (वार सांरग म० १)	१२४२		२४	११५
हिन्सा तो मनते नहीं छूटी(सारंग म० ५)	१२५३		६	११५
वेद कतेब कहो मत झूठे झूठा(प्रभाती कबीर)	१३५०		६	११६
कबीर भांग माछली सुरापान(श्लोक कबीर)	१३७७		४	११६
रोजा धरै मनावै अलाह(आसा कबीर)	४८३		६	११७
जीआ वधहु सु धर्म कर थापिहु(मारू कबीर)	११०३		२	११८
ओन्म अखर सुनो बीचार(रामकली म० १)	६३०		२	१२१
एक पिता एकस के हम बारिक(सोरठ म० १)	६११		२७	१२३
आदि गुरए नमह, जुगादि(सुखमनी म० ५)	२६२		१२	१२६
हरे नमस्ते हरे नमः (गौड़ नामदेव)	—		—	१२६

श्लोक सूची वचित्र नाटक आदि पादशाही १०

श्लोक	पन्ना ग्रन्थ	नं०	पेज
बिन करतार न कृतम मानो—	—	—	६
जो कोई होत भयो जग स्याना	६३	१४	१२
परम पुरुख किन्हीं नहीं पायों	६३	१५	१२
जिन जिन तनिक सिद्धि को पायो	६४	१६	१२
परम तत किन्हीं न पहचाना	६४	१७	१२
जे प्रभ परम पुरुष उपजाये	६६	२६	१३
हम एह काज जगत मो आए	७१	४२	१३
जे जे भए पहले औतारा	७१	४४	१३
स्वांगन में परमेसर नाहीं	७४	५५	१३
ओम आदि रूपे अनादि स्वरूपे	—	—	२१
पाए पड़ी परमेसर के जड़	२८	६०	५१
पाषान पूज हों नहीं	६६	३५	५१
काहे को पूजत पाहन को(स्वये पा० १०)			५१
आदि, अपार, अलेख, अनन्त(चंडी चरित्र)			५६
अहो गुण गाँवत वेद सुनो तुम (दशम ग्रन्थ)			६५
वेद जपे जेहे को तेहे आप सदा करिये (,, ,,)			६५
नहीं वेद प्रमाण हैं मत भिन्न २ बखान है (,, ,,)			६५
कहू न पूजा कहू न अर्चा(दशम ग्रन्थ कल्की अवतार)			६६
जिन्हें वेद पठयो सो बेदी कहाये(व० नाटक पेज ५२-श्र० १)			६७
उन वेदयन की कुल विखे प्रगटे नानक राए	—	—	६७
जो हम को परमेसर उचरहें(व० नाटक पेज ६८ श्र० ३२)			८३
मैं हूं परम पुरख का दासा (,, ,, ३३)			८३
एह तो धर्म हमारा सार(पन्थ प्रकाश निवास २५)			१०१

श्लोक राग आदि	पन्ना ग्रन्थ	पंक्ति	पेज
आप हवन के लाभ जो गाये(पन्थ प्रकाश निवास २५)			१०३
तब गुरू सर्व सामग्री („ „)	२६		१०४
कुठा, हुक्का चरस (रहत नामा देसा सिंह)			११६
बकरा झटका बीच न करे(पन्थ प्रकाश)			११७
जो तुम सिख हमारे आरज(कृत ज्ञानी ज्ञान सिंह जी)			१२३
तृतीये जो नर नारी आरज („ „)			१२३
होवे जा ते यज्ञ पूजा बढ़ें वैदिक(गुरू धर्म ध्वजा)			१२४
नमस्ते अजाते नमस्ते अपाते(जाप जी)			१२६

श्लोक सूची वार भाई गुरदास जी

	वार	श्लोक	पेज
किसी पुजाई सिला सुन	— १	१८	५२
निन्दा चाले वेद की	— १	१७	६६
निज फतेह बुलाई सत्गुरू	— ४१	१८	१००
घी ते होवन होम	— ४	८	१००
आन महा परशाद बंड खुवाया	— २०	१०	१११

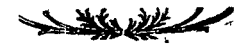

ओ३म्

प्रथम प्रवचन

भाई गुरु दास जी सिख पंथ के प्रसिद्ध नेता हुए हैं। उन के वचनानुसार जब भारत वर्षमें जहालत भ्रम और अज्ञानता का राज्य था, जब जनता सन्मार्ग से भटक कर पथ भ्रष्ट या गुमराह हो चुकी थी अविद्या के कारण ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र चारों वर्ण अपने कर्त्तव्य कर्मको भूल चुके थे। वेद रूपी सूर्य पाखण्ड मत के बादलों से ढक कर ओझल हो गया था।

सत्य ज्ञानका प्रकाश न रहने के कारण देश वासी धर्म का मार्ग छोड़कर पाप मय मार्ग की ओर अग्रसर हो रहे थे, ऐसे समय में जीवों पर अपार दया करने के भाव के कारण प्रभु के अटल सृष्टि नियमानुसार, कि समय समय पर महानात्माएं आकर भूली भटकी आत्माओं को वेद मार्ग दिखाने का प्रयत्न किया करती हैं और वह अपनी आत्मिक और मानसिक शक्ति के अनुसार अपने जीवन काल में जंहा तक उन से बन पड़ता है कर्त्तव्य का पालन किया करती हैं। गुरु नानक देव जी मेहता कालू के पुत्र-रूप में जन्म लेकर आए और उनके प्रश्चात् उनके मिशन को पूरा करने के के लिए (नव) ९ सिख गुरुओं ने क्रम से पुरुषार्थ किया।

परन्तु समय आया जब उन के अनुयाई मदहोशी, अविद्या और आपसी फूट के कारण अपने गुरुओं के उपदेश को ठीक २ न समझ पाए अज्ञानता और भ्रम में पड़ कर उल्टे मार्ग पर चल

निकले, गुरमुख होते हुए मन सुख बन गए। समझते तो रहे अपने आप को गुरु पंथ का यात्री, परन्तु प्ररिणाम् यह हुआ कि वह अपने ध्येय अथवा लक्ष से भी भटक गए, वह गुरुओं के नाम पर ऐसे सिद्धान्तों को अपनाने लगे, जिनका गुरुओं ने सर्वथा विरोध और खण्डन किया था। हमारा दृढ़ विश्वास है और दावा है कि गुरूनानक आदि दस (१०) गुरूओं ने जो मार्ग अपने सिखों को बतलाया था। आज उनके नाम लेवा सिख उस मार्ग से दूर हट गए हैं। परन्तु अज्ञानता से वह उसको गुरु पंथ या खालसा मार्ग समझे बैठे हैं।

हम ठोस प्रमाणों से सिद्ध करने का यत्न करेंगे कि इस समय उन का मार्ग गुरु मार्ग से सर्वथा विरुद्ध है, जिस को गुरुओं ने उन के लिये उपदेश किया था।

हम अपने उन भोले भाले भाईयों को अपनी तुच्छ बुद्धि अनुसार उन गलतियों का पता देंगे, जो उन्होंने गुरवाणी का सत्यार्थ न समझ कर अपना ली हैं, हमारा ऐसा करने में पवित्र प्रयोजन यह है कि देश में अनेकता न फैले, भाई भाईयों में अश्रद्धा और शत्रुता न बढ़े। हम सब एक मत होकर मिलकर और एक दूसरे की सहायता करते हुए ज्ञान तीर्थ के यात्री बनें। झूठे पथ को दुःखदाई, हानिकारक और देश और जाति में फूट डलवाने वाला समझ कर तुरन्त त्याग देवें।

आशा है कि जिस पवित्र भाव से प्रेरित हो कर हम इस पुस्तक को लिख रहें हैं पाठकगण उसी भाव से इस को पढ़ेंगे और हमारा यह अटल विश्वास है कि यदि देश वासियों ने पक्ष-

पात छोड़ कर सत्य के ग्रहण के लिए इस को पढ़ा तो उन का और देश जाति का बहुत ही भला होगा।

इन शब्दों के लिखने के पश्चात् परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वह हम सब के हृदयों को पवित्र करें, मनों की मैल को धो डालें, हमारी बुद्धि को निर्मल करें, और उसमें अपने निर्मल ज्ञान का प्रकाश भर देवें। जिस से हम लोग अपने हित और अनहित को जान करके अपने और सब के भले के सिद्धान्तों को अपनाते हुए मनुष्य जीवन को सफल बना सकें।

मनुष्य मात्र का हित-चिन्तक
स्वामी अमृतानन्द सरस्वती
वैदिक साधनाश्रम यमुनानगर
(अम्बाला)

विचार आरम्भ

प्यारे पाठक ! इस समय तक धर्मात्मा विद्वानों के चरणों में बैठ कर सत्सङ्गों में जाकर जैसा भी धर्मोपदेश उनके पवित्र मुख से सुना और वेद साम्प्रदायक पुस्तकों को पढ़ा और देखा उनके आधार पर नवीन सिख पन्थ में जो भी वेद विरुद्ध भाव दृष्टि गोचर हुआ और दसों गुरुवों के सिद्धान्त विरुद्ध जो २ भूलें आज कल सिख पंथ में आई हुई दृष्टि गोचर हुई है, उन को शंका समाधान के रूप में इस पुस्तक द्वारा विचार शील विद्वानों और सर्वसाधारण के सन्मुख रखने का प्रयत्न किया गया है, जिस से सत्याभिलाशी सब भाई हठ और दुराग्रह को त्याग कर पक्षपात से दूर रह कर इन पर विचार करके सत्य को ग्रहण और असत्य का परित्याग करने में यत्नशील हो सकें।

शंका—जब हम किसी समाज या धार्मिक समागम में जाते हैं और वहां विद्वानों के मुखारविंद से उपदेश सुनते हैं तो उनमें ईश्वर के नाम की या प्रभु के नाम की बड़ी दुहाई दी जाती है, जो भी आता है वही कहता है कि ईश्वर का भजन करो। प्रभु भक्ति में अपना जीवन लगाओ, यही मनुष्य जीवन का उद्देश्य है यदि ऐसा न करोगे तो नरक गामी बनना पड़ेगा इत्यादि।

अब हम आप से पूछते हैं कि ईश्वर को आज तक किसी ने देखा भी है ? वह है भी या नहीं। हमारी समझ में तो ईश्वर

की रट केवल खाली बैठने वाले आलसी लोगोंके दिमाग़ की उपज है। यदि ईश्वर होता तो आज तक किसी को दिखाई देता।

समाधान—मित्रवर ! आपने बहुत अच्छा प्रश्न किया, यह प्रश्न बहुतों की समझमें नहीं आता परन्तु फिर भी हम यथाशक्ति आप को समझाने का प्रयत्न करेंगें। आशा है आप उसको ध्यान पूर्वक सुनेंगे, और फिर इस पर मनन करेंगे, हमारे पूर्वज महा-पुरुषों ने कहा है कि पहिले बात को ध्यान पूर्वक सुनना चाहिए फिर उसपर गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए। विचार के पश्चात् निधिध्यासन अर्थात निश्चय करना चाहिए, फिर उस बात को अपने जीवन में साक्षात्कार करना अर्थात प्रयोग में लाना चाहिये तभी उस का पूरा पूरा लाभ हो सकता है। गुरु नानक देव जी ने कहा भी है।

"गाविये सुनिये मन रखिये भाओ।
दुःख पर हर सुख घर लै जाए ॥ (जपजी)

अर्थ— सुनने, गाने और मन में इस पर विचार करने और क्रयात्मिक रूप में लाने पर मनुष्य के दुःख दूर हो जाते हैं। फिर वह सुखों को अपने घर में लाता है आनंद में जीवन व्यतीत करता है।

श्रीमान जी ! ईश्वर केवल कल्पना नहीं है अपितु वह शत प्रतिशत सत्य है। गुरू नानक देव जी ने जपजी साहब में लिखा है।

आदि सच जुगादि सच ॥ है भी सच
नानक होसी भी सच ॥१॥ (जपजी)

अर्थात्— सत्य का अर्थ हैं तीन काल में एक रस रहने वाला, जिसमें कमी बेशी यां परिवर्तन न हो अर्थात् परमात्मा सदा सत्यस्वरूप, आदि में सत्य, सृष्टि उत्पत्ति से पहिले भी विराजमान था इस समय भी सत्य है और भविष्य में भी सत्य रहेगा, वह नाश रहित और अटल है उस का कभी लोप नहीं होता और रोगी भी कभी नहीं होता इत्यादि।

प्रिय भ्राता! सब वस्तुएं इन प्राकृतिक नेत्रों से दृष्टिगोचर नहीं होती, जब कि संसार में उन की सत्ता विद्यमान है।

यथा—

मनुष्य के नेत्र अपने से सीधी ऊंची वस्तु को नहीं देख सकते, जैसे हम अपने नेत्रोंसे मस्तक और सिर को नहीं देख सकते तो इस का अर्थ यह नहीं होता कि हमारा मस्तक या सिर है ही नहीं। अति समीपस्थ वस्तु को हम नहीं देख सकते आंख का सुरमा, दिन में चन्द्रमा तारागन आदि दृष्टिगोचर नहीं होते। मनुष्य अपने मन को आज तक नहीं देख सका।

दिशा, काल, आकाश और वायु इन चक्षुओं के द्वारा दृष्टि गोचर नहीं होते। तो क्या इन सबकी संसार में कोई सत्ता ही नहीं। कारण यह है कि हमारी आखें स्थूल पदार्थ अर्थात् माया प्रकृति से बनी हुई है साकार वस्तुओं को देख सकती हैं परमात्मा को देखने के लिये दूसरी आंखों की आवश्कता है जिन को ज्ञान की आंखे या दिव्य ज्ञानचक्षु आदि नामों से पुकारा जाता है।

आंख तो क्या हमारा मन भी जो इन कर्म और ज्ञान इन्द्रियों से सूक्षम है, परमात्मा तक आसानी से नहीं जा सकता उपनिषदों में लिखा है।

यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सद् ।

और महाभारत में भी एक स्थान पर लिखा है कि अचिन्त्य भावों को हम अपने भौतिक मनसे चिन्तन नहीं कर सकते, प्रकृति से परे की वस्तु को अचिन्त्य कहा जाता है। और वही परमात्मा है, गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी लिखा है :-

गो गोचर जे लग मन जाई ।
सो सब माया जानो भाई ।।

जहां तक हमारी ज्ञान कर्म इन्द्रियों की पहुंच है और जहां तक मन इन को ले जा सकता है वहां तक पकृति या माया का ही पसारा है क्योंकि हमारी इन्द्रियें तो जड़ जगत तक ही रह जाती हैं। गुरबाणी में भी कहा है:-

अगम अगोचर रूप न रेखया ।
खोजत खोजत घटि घटि देखया ।।
(बिलावल महला पहिला)

अर्थात्—परमात्मा मन बुद्धि और इन्द्रियों की पहुंच से परे है उसका न कोई रूप है और न रंग,संसार के ज्ञानी महात्मा पुरुषों ने उस की खोज की, तो उसको जगत के हर परमाणु और हर पदार्थ में देखा फिर कहा:-

सरब निवासी सदा अलेपा सब में रहा समाओ ।।
(सोरठ महला ५)

अर्थात्-सब जगह उस का निवास है, परन्तु वह सब से

पृथक और निर्लेप है और सब में समाया हुआ है फिर कहा:-

बलिहारी कुदरत वसिया। तेरा अन्त न जाई लखिया ॥१॥
जाति में जोति जोति में जाता अकल कला भरपूरि रहिया ॥

(आसा महला पहिला)

अर्थात्-मैं उस प्रभु के कुरबान जाऊं जो कुदरत या नेचर के अन्दर भी बस रहा है क्योंकि कुदरत भी कादर के आसरे है वह बेअन्त है उसका अन्त लखा नहीं जाता सृष्टि के अन्दर जिस की ज्योति है और वह ज्योति के अन्दर भी व्यापक है। वह अनन्त शक्ति से सृष्टि के अन्दर एक रस भरपूर है। प्रन्सिपल जोध सिंह जी M.A. ने इस शब्द का भाव बतलाते हुए लिखा कि सृष्टि में वह ज्योति है और उस ज्योति में सृष्टि स्थिर है।

उपनिषदों में भी ऋषि लिखते हैं कि ईश्वर का स्वरूप किसी शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध में नहीं आ सकता अर्थात् ईश्वर न शब्द का विषय है न उसका कोई रूप और रंग है और न वह छुआ जा सकता है, न वह खट्टा मीठा और न सुगन्ध वा दुर्गन्ध वाला है वह अनादि और अनन्त माया से परे और एक निश्चल सत्य है। आपको यह विश्वास रखना चाहिए कि ईश्वर पूर्व था, अब है और भविष्य में भी होगा, क्योंकि वह सत्नाम है उसकी प्राप्ति के जो साधन हैं उनमें सब से पहिला साधन मन को निर्विषय करना है अर्थात् शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध इन पांचों विषयों में से एक में भी मन फंसा हुआ न हो, तब समझो कि भक्त ईश्वर के पास पहुंच गया, परमात्मा और आत्मा के मध्य जो अज्ञान से दूरी थी वह दूर हो गई। क्योंकि परमात्मा तो आत्मा में सदा ही व्यापक है दूसरे शब्दों में ईश्वर वाणी का विषय

नहीं हां वाणी ईश्वर के गुणों का वर्णन यथा शक्ति कर सकती है। इस लिये गुरू नानक आदि दसों गुरुवों की वाणी ईश्वर की महिमा का वर्णन करने वाली और उसका यश गान करने वाली तो हो सकती है परन्तु ईश्वर का स्वरूप दिखाने वाली नहीं हो सकती। किसी धार्मिक ग्रन्थ या पोथी पुस्तक में ईश्वर के गुण कर्म तो भले ही लिखे हों, इस लोक और परलोक के ज्ञान और सुधार की बातें भी दरज हों, परन्तु वह ग्रन्थ या पोथी बिना चेतन गुरुवों की सहायता के या बिना किसी अध्यापक के पढ़ाने के, न तो ज्ञान देने वाली हो सकती है और न किसी का सुधार कर सकती है। इस लिये इस की उपासना करना इस के सन्मुख सिर झुकाना; मत्था टेकना या अरदास करना अनुचित और भूल है। इसी प्रकार का एक रस परमात्मा जो सर्वव्यापक है उस का न अवतार हो सकता है और न ही उसकी कोई मूर्ति ही बन सकती है। जब मूर्ति ही नहीं बन सकती तो फिर पूजा किस की इसी वास्ते तो दशम गुरू गोबिन्द सिंह जी ने बताया:-

बिन करतार न कुतम मानो।
आदि अजुनि अजय अविनाशी तेह परमेश्वर जानो॥

अर्थात्- सृष्टि के कर्ता को अपना इष्ट देव मानो उस की बनाई हुई सृष्टि को देख कर सरजनहार की शक्ति को अनुभव करो। परन्तु किसी बनी हुई वस्तु को चाहे व ईश्वर की बनाई हुई हो या जीव की, कभी उपास्य न मानो क्योंकि परमात्मा ही सर्वोत्तम जन्म मरण से रहित कभी हार न खाने वाला, नाश से रहित है, उस एक को ही परमेश्वर जानो। गुरू नानक देवजी ने कहा है:-

सगल आध देहि लो रोनी,
सो मुख जलओ जित कहे ठाकुर जोनी॥ ३॥
जन्मे न मरे न आवे न जाए ।
नानक का प्रभु रहिओ समाएं ॥ (भैरों म० ५

अर्थात्- जो लोग पीतल या पत्थर आदि किसी धातु को ठाकुर मान कर पिंगोड़े में डाल कर उसको झूलने में झुलाया करतेहैं और कहते या समझते हैं कि हम ठाकुर पूजा कर रहे हैं। ऐसा कहने वालों का मुख जला देने के योग्य है, जो कहे कि ठाकुर जन्म मरण में आता है अथवा किसी मां के पेट से जन्म लेकर संसार में प्रकट होता है।

प्यारे मित्र ! परमेश्वर न जन्मता और न ही मरता है और न वह कहीं आता है और न ही कहीं जाता है। नानक जी कहते हैं कि परमात्मा तो तीन काल एक रस रहता है और हर जगह पर समाया हुआ है। फिर कहा—

थाप्या न जाए कीता न होए ।
आपे आपि निरञ्जन सोए ॥ (जपजी)

अर्थात्—परमात्मा न स्थापन किया जा सकता है और न किसी के बनाए से बनता है वह तो आपे आप या स्वयं सिद्ध है। इस लिए उस को अवतार पैगम्बर या गुरवों के रूप में आया हुआ मानना या ग्रन्थ, पुस्तक, मकाम या मूर्ति में स्थापन करना अज्ञानता है। फिर कहा -

"रूप न रेख न रंग किछु ॥ त्रैहगुण ते प्रभु भिन्न ॥
(गोड़ी म० ५)

अर्थात्-परमात्मा रूप रंग और रेख से न्यारा है, सतो गुण, रजो गुण और तमो गुण से बिल्कुल अलग और भिन्न है।

प्यारे पाठकगण ! यह है गुरू नानक आदि दसों गुरूवों के वेदानुकुल सिद्धान्तों का सार और दर्शन। इस के पश्चात् हम क्रम से उन सिद्धान्तों पर प्रकाश डालने को प्रयन्न करेंगे जिन को बिचार पूर्वक मनन करने और मानने से सब लोग एक मत होकर आपस के वैर विरोध और मत भेद भुला कर प्रेम पूर्वक जीवन बिता कर आनन्द लाभ उठा सकें।

संसार का एक धर्म

प्यारे जिज्ञासुवों ! वैदिक धर्ममें सबसे प्रथम यह सराहनीय बात है कि वह मनुष्य को मानसिक परतंत्रता से मुक्त करा कर आत्मिक स्वतन्त्रता प्रदान करता हैं, परन्तु हमारे नवीन सिख विद्वान यह कहते और लिखते हैं कि वैदिक धर्म से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है इसी प्रकार कई हिन्दु नेताओं का भी यह विचार है कि सिख पंथ एक पृथक सम्प्रदाय है। परन्तु यह दोनों विचार ठीक नहीं, कारण यह कि जिस प्रकार महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज संसार का, एक वैदिक मत मानते थे, ठीक उसी प्रकार उन से पूर्व गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज इन प्रचलित मतों का निषेध करके एक धर्म का प्रचार करना चाहते थे, स्वामी दयानन्द जी महाराज लिखते हैं कि:—

जो २ सिद्धान्त सब को मान्य हैं उनको मैं मानता हूं, जैसे-सत्य बोलना सब के मत में अच्छा और झूठ बोलना बुरा है ऐसे सत्य सिद्धान्तों को मैं स्वीकार करता हूं। और मत मतान्तरों के

आपस के मत भेद और झगड़े हैं उनको मैं नहीं चाहता। क्यों-कि इन ही मतों ने अपने अपने मतों का प्रचार करके मनुष्यों को झगड़ोंमें फंसा दिया है और एक दूसरे का शत्रु बना दिया है। ऐसी गलत बातों का खण्डन करके, सत्य का समर्थन करके, सब को एक मत बना, द्वेष और मत भेद छुड़ा कर परस्पर प्रेम तथा प्रीति पैदा करना चाहता हूं। सर्वशक्तिमान परमात्मा की कृपा और सहायता से और आप्त महापुरुषों की सहायता से यह वैदिक सिद्धान्त हर जगह संसार में प्रचलित हो जावें जिस से सब लोग सुगमता पूर्वक धर्मार्थ काम मोक्ष को प्राप्त कर, सदा उन्नत और आनंदित होते रहें यही मेरा असल मकसद है। (सत्यार्थ प्रकाश)

ऐसे ही पवित्र भाव गुरु गोबिन्द सिंह जी विचित्र नाटक में लिखते हैं:-

"जो कोई होत भयो जगि सियाना।
तिन तिन अपनो पंथ चलाना ॥ १४
"परम पुरुख किन्हूं नह पायो ।
वैर बाद अहंकार बढायो ॥ १५
"जिनि जिनि तनिक सिद्ध को पायो
तिन तिन अपना राह चलायो ॥
"परमेसर नह किन हूं पहिचाना।
मम उचार ते भयो दिवाना ॥ १६
"परम तत् किन्हूं न पछाना।
आप आप भीतर उर झाना ॥ १७

"जे प्रभु परम पुरुख उपजाए ।
तिन तिन अपने राह चलाए ॥ २६
"हम इह काज जगत मो आए ।
धर्म हेत गुर देव पठाए ॥
"जहां तहां तुम धर्म बिथारो ।
दुस्ट दोखिअन पकर पछारो ॥ ४३
जे जे भये पहिल अवतारा ॥
आप आप तिन जाप उचारा ॥
"प्रभु दोखी कोई न विदारा ॥
धर्म करन को राह न डारा ॥ ४४
"सुआंगन में परमेसर नाहीं ।
खोज फिरे सब ही को काहीं ॥
"अपनो मन करमो जह आना
पार ब्रह्म को तिनी पछाना ॥ ५५

अर्थः– देश के अन्दर जो भी थोड़ा स्याना हो गया जिस को कुछ अकल आ गई तो उसने अपने नाम पर एक नया सम्प्रदाय चला दिया। परम पुरुष परमात्मा को उन्होंने पाया ही नहीं, उन्होंने प्रभु की सृष्टि में शत्रुता, झगड़े और अभिमान को बढ़ावा दिया। हर सम्प्रदाय अपने आप को सब से उत्तम मानने लगा और दूसरों को कायर नीच और मन मुख कह कर घृणा फैलाने लगा। परन्तु हम (गोबिन्द सिंह जी) तो इसी ध्येय को

लेकर क्षेत्र में उतरे हैं, कि एक धर्म को दुनिया में प्रचलित किया जाए, इसी लिये गुरु देव परमात्मा ने हमको संसार में भेजा या जन्म दिया है। और आज्ञा दी है कि हर जगह वैदिक धर्म का प्रचार करो और दुष्ट और द्वेषी मनुष्य जो भी तुम्हारे सन्मुख आए उस को पछाड़ दो। इससे पहिले जितने भी अवतार पैगम्बर या मजहब के बानी हुएहैं उन सब ने अपने ही नाम का जाप करवाने के लिये अपने पैरुवों को आदेश दिया । जो लोग प्रभु द्वेषी या नास्तिक थे उन को किसी ने भी दूर हटाने का यत्न न किया और न ही किसी को वेदोक्त धर्म कर्मके मार्ग पर लगाया। ऐ मनुष्यों ! याद रखो कि इस स्वांगों या बहु रूपिया पन में परमेश्वर की प्राप्ति न होगी। भेषी लोग खोज कर कर के हार गए परन्तु असलीयत तक कोई पहुंच न सका, जिन्होंने अपने मन को वश में कर लिया है पारब्रह्म परमेश्वर को उन्होंने ही वास्तव में जान लिया।

प्यारे पाठक ! सृष्टि की उत्पति से लेकर आज से पांच सहस्त्र वर्ष पूर्व पर्यन्त अर्थात महाभारत काल तक सारे संसारका एक ही वैदिक धर्म था और वैदिक धर्मियों का सारे संसार में चक्रवर्ती राज्य था।

जिन के आधीन देशों के माण्डलीक राज थे, जो वैदिक धर्म अनुयाई थे। इतिहास इस का साक्षी है कि कौरवों और पाण्डवों के काल तक उनके आधीन सारे भूगोल के राजा और उन की प्रजा थी और मनु महाराज का विधान हर स्थान पर प्रचलित था, कि आर्यावर्त देश के वेद ज्ञाता विद्वान ब्राह्मणों से सारी दुनियां के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शद्र मलेछ विद्या प्राप्त करें.

महाराज युधिष्टर के राजसूय यज्ञ और महाभारत के युद्ध में सारी दुनियां के राजा सम्मिलित हुए थे। कहा भी है-

"विनाश काले विपरीत बुद्धि"

अर्थात्- जब नाश होने के दिन आते हैं तो मनुष्यों की बुद्धि उल्टी हो जाती है। और देश में उल्टे रसम और उल्टे ही कर्म होने लग जाया करते हैं, कोई उनको सीधी कहे तो वे उल्टी मानते हैं! जब बड़े २ ऋषिमुनि विद्वान राजा और महाराजा महाभारत के युद्ध में मारे गए तब वेद विद्या और धर्म प्रचार बन्द हो गया। परस्पर ईर्षा द्वेष और अभिमान बढ़ गया जो भी किञ्चित बलवान हुआ वह मुल्क को दबा कर बलात् राजा बन बैठा और जो कुछ विद्वान और चालाक हो गया उसने अपने नाम पर एक नया मत चला दिया जिसका यह परिणाम हुआ कि जहां राज्य सत्ता के टुकड़े २ हो गए वहां एक सहस्त्र के लगभग एक दूसरे के विरुद्ध मत मतांतर उत्पन्न हो गये। अर्थात जाति की बुद्धि भ्रष्ट होने से सारा शरीर ही निकम्मा हो गया जब अविद्वान और अनपढ़ ब्राह्मण पूज्य बन बैठे, तो सब वर्णों का पढ़ना पढ़ाना छूट गया। देश में अविद्या फैल गई ब्राह्मण केवल दान की कमाई पर निर्वाह करने लगे स्वयं गुरु बन कर छल कपट और अधर्म से दूसरों की कमाई पर मौज उड़ाने लगे, अविद्या के कारण सर्व साधारण ने यह मान लिया कि जो कुछ ब्राह्मणों और गुरुवों के मुख से निकले बस वह ही धर्म है उनहीं की हां में हां मिलाना, सत्वचन कहना और उन की सेवा करना ही मुक्ति का साधन है। इन धर्म के ठेकेदार गुरु घंटालों ने अनपढ़ और मूर्खों के सन्मुख जो भी गप्प हांकी उन भोले भालों ने उसी को धर्म मान लिया।

प्रश्न- धर्म एक है या अनेक।

उत्तर–धर्म तो एक ही है परन्तु लोगों की अज्ञानता के कारण मत अनेक हो गए हैं।

प्रश्न–जिस प्रकार एक बड़े नगर को जाने के अनेक मार्ग होते हैं और उन सब मार्गों पर चल कर यात्री उस नगर में पहुंच जाया करते हैं, इसी प्रकार धर्म भी अनेक हैं, जो भी जिस धर्म पर श्रद्धा रख लेता है उसी पर चल कर वह अपने लक्ष मोक्षधाम तक पहुंच जाता है।

उत्तर–यदि धर्म अनेक हैं तो वह सब एक दूसरे के विरुद्ध हैं या एक दूसरे के अनुसार ? यदि कहो कि एक दूसरेके विरुद्ध तो एक को छोड़ दूसरा धर्म नहीं कहला सकता इसलिये उनमें कोई एक तो धर्म होगा और शेष सब अधर्म, जैसे दो और दो चार तो ठीक परन्तु तीन पांच या छ सात कहना गल्त होगा क्योंकि सत्य सदा एक ही होता है और झूठ बहुत होते हैं। और यदि आप यह कहें कि सब एक दूसरे के अनुकूल हैं तो फिर उनका पृथक २ नाम रखना ठीक नहीं। इस लिये मानना पड़ेगा कि धर्म तो तीन काल में एक ही है इस लिये विश्वास रखो कि जितने भी मत मतान्तर एक दूसरे के विरुद्ध और विरोधी हैं सब अविद्या से भरे हुये हैं इन मत मतान्तरों के जाल में फंस कर अज्ञानी लोग सद्मार्ग से भटक कर महान कष्ट भोगते हैं और मानव जीवन को निरर्थक गंवाते है।

इन मजहबी दुकानदारों और धर्म के ठेकेदारों ने अनजान जनता की कमाई और इस लोक और परलोक की लाई का नाश करके स्वयं गुलछर्रे उड़ाने की राह निकाल रखी है,

याद रखिये कि धर्म के सर्व माननीय सिद्धांत तो तमाम मजाहब ने भी किसी न किसी शकल में स्वीकार किये हुए हैं। अब हम मनुष्य मात्र को मत मतान्तरों की कैद से स्वतन्त्र होने कीं प्रेरणा करते हुऐ वैदिक सिद्धांत और गुरवाणी के ठोस प्रमाण देकर यह सिद्ध करने का यत्न करेंगे कि:-

"सौ स्याने एक मत मुर्ख आपो अपनी"

सचाई एक है अतः उस को ग्रहण करके और झूठ को त्याग करके मनुष्य जन्म को सफल बनाने का सब नर और नारी प्रयत्न करें।

ओंकार महिमा विचार

वेदादि सत्य शास्त्रों में प्रसिद्ध और ऋषि मुनि आप्त विद्वानों और सत्गुरुवों का अनुभव और स्वीकार किआ हुआ ओंकार परमात्मा का सबसे उत्तम पवित्र नाम है उपनिषदों में बड़े सुन्दर ढंग से इस का व्याख्यान है। प्रमाण सहित और तर्क सहित बात को मानने वाले और बिना दलील झूठी बात का खण्डन और त्याग करने वाले दर्शन शास्त्रों में भी ओंकार द्वारा प्रभु भक्ति और उपासना करने का विधान है और इसके ही स्मरण की आज्ञा वेदों में दी गई है। ओ३म् परमात्मा का निज नाम है और इसका स्मरण मनुष्यों के कल्याण का कारण है। इस लिये सर्वत्र इसकी महिमा का गान है। गुरु ग्रन्थ साहिब में गुरु अर्जन देव जी ने इसको हर बाणी और हर राग के आदि में लिख कर इसकी सर्वमानता को प्रकट किया है। इसके इलावा गुरवाणी में सैंकड़ों स्थान पर इसके जापकी आज्ञा दी गई है सब

के सब गुरु सिख अपने हर लेख और बही खाता के रोज हिसाब में सबसे प्रथम इसको लिखते हैं " ओं स्मर " यह यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के एक मन्त्र का भाग है जिसका अर्थ है कि जैसे पिता अपने पुत्र को, गुरु अपने सिख (शिष्य) को उसके भले और कल्याण के लिये कल्याणकारी मार्ग पर चलनेका उपदेश करता है। ठीक उसी प्रकार परमात्मा सब का रक्षक, पिता, मालिक और स्वामी राजा और सत्गुरु होने से सब का परमगुरु है इस लिए प्राणीमात्र के भले के लिए यह सन्देश दे रहा है कि मृत्यु के समय जब आत्मा शरीर से पृथक होता है तब जीव पूर्व वासनाओं के अधीन होकर फिर २ इन वस्तुओं का चित्र अपने सम्मुख रखता है। वासना की रज्जु में जकड़ा हुआ अपने आप को बेबस जानकर नेत्रों से आंसू टपकाता और कलेश उठाता है। यह कठिन समय सबके लिये समान है। ऐसे समय में " ओ३म स्मर " का पवित्र वचन आत्मा को सम्बोधन करके यह सुनारहा है कि बड़ा ही कठिन और विकट समय है, संसार के पदार्थों से अपनी वृत्तिको हटाकर, चित् से ममता को मिटाकर, मोहजाल से अपने आपको बचाकर, सचेत और होश्यार होकर 'ओंकार' के जाप से, ऐ मनुष्य ! तु जगदीशवर के ध्यान में मग्न होजा और इस ज्ञान में ही लग जा, यह रोने धोने का समय नहीं है। मार्ग किस ओर है और तू किधर जारहा है, भाव तो सीधा और सरल है, परन्तु तू मोह माया में बन्धा हुआ भ्रम के भंवर में डूब रहा है। यह भयानक समय है, समय का विचार कर अपनी शक्ति का आधार ले, उत्साह को काममें ला, ऊपर उठ, मंजल तेरे सामने है, प्रभु की गोद तो हर समय खुली है, अपनी गति को उस ओर बढ़ा, धीरज धार, विजय तो प्राप्त है, अब प्रमाद में पड़ कर डर मत, संसार के

प्रलोभन जो मित्र बनकर तेरा ध्यान अपनी ओर खैंच रहे हैं, वास्तव में यही तेरे शत्रु हैं, यह तो सरासर छल हैं, तू इन के धोखे में न आ, इन का साथ छोड़ने में ही तेरा कल्याण है। ऐ मानव ! भोग और विषय वासनाओं के विषसे दूर हो जा, दृढ़ धारना से प्रभु चरणों में लीन हो जा कितना सुन्दर उपदेश " ओ३म स्मर " द्वारा वेद भगवान दे रहा है।

ओ३म् इति एक अक्षरं ब्रह्म

यह सप्तश्लोकी गीता का बचन है, इस पर जन्म साखी भाई बाला के पृष्ठ १० पर लिखा है कि एत दिन बचपन में नानक जी ने इस श्लोक का उचारण किया तो माता पिता ने कहा। ऐ पुत्र ! संस्कृत हमारी समझ में नहीं आती, इस का हमें अर्थ सुनाओ, तो नानक जी ने कहा,"भगवान कृष्ण ने अपने प्यारे भक्त अर्जुन को उपदेश दिया कि ऐ अर्जुन ! ओंकार जो प्रथम अक्षर वेद में है और प्रणव भी इसी का नाम है सो ओंकार जो परम पुरुषोतम जिस को पूर्ण ब्रह्म कहते हैं तिस के सांस का शब्द है, जिस ने वाणीं रूप होकर प्रथम ब्रह्मा के हृदय में प्रवेश किया, सो उसी वाणी के बल से संसार को रचा और चारों वेद भी संसार में प्रवृत किये और भक्ति, परमेश्वर का भजन भी प्रवृत किया जो कोई इस ओंकार का जाप करेगा और मैं जो परम पुरुष हूं जो मेरा ध्यान धरेगा, जो वह प्राणी शरीर का त्याग करेगा, सो मेरे परम धाम को प्राप्त होगा। "

इसी जन्म साखी में आगे चल कर लिखा है कि सिद्धों ने नानक जी से पूछा कि "आप कुछ इष्ट भी करते हैं" तो श्री गुरू

जी ने कहा "हमारा इष्ट एक ओंकार जो सच्चा मन्त्र है उसी से हमारा निस्तारा होगा" सिख विद्वानों ने भी माना है कि एक ओंकार अकाल पुरुष का सर्वोतम नाम है। जैसा कि सोढी तेजा सिंह जी लिखते हैं कि "जब सृष्टि रची थी तो ओ३म् जैसी ध्वनी हुई थी जिस से सर्व व्यापक प्रभु जो केवल एक है का नाम ओ३म् है।" ज्ञानी शेर सिंह जी ने लिखा कि ओ३म् के कई अर्थ धार्मिक विद्वानों ने अपनेर विचारनुसार किये हैं, परन्तु गुरू वाणी में ओ३म् का अर्थ केवल अकाल पुरुष ही है। भाई दया राम जी आकफ ने लिखा कि ओंकार निज नाम है, और सब नाम गौणिक हैं। अ, ३, म, तीन का जोड़ ओंकार है और चौथा जो अनुस्वर है वह इन तीनों अक्षरों में मिला हुआ और अलग भी है। वेदानुसार 'अ' का अर्थ संसार का बनाने वाला प्रकाश देने वाला और सब व्यापक है, 'ऊ' का अर्थ है सूर्य आदि वसु जिस के गर्भ में हैं और वह इन को प्रकाश देता है और सर्व शक्तिमान है, 'म' से, कि वह सब का स्वामी नित्य और ज्ञान स्वरूप है और अनुस्वर से इशारा है कि वह सब में मिला हुआ और सब से अलग भी है; इस का विचार मनुष्य बुद्धि से परे है।

प्रो० साहिब सिंह जी बी० ए० ने लिखा, कि ओंकार संस्कृत के ओ३म् शब्द से लिया गया है, यह शब्द सब से पहले उपनिषदों में प्रयोग हुआ है। मान्डूक्य उपनिषद में लिखा है कि जो कुछ हो चुका है, जो इस समय विद्यमान है और जो होगा, वह सब कुछ ओ३म् ही है। प्राचीन विचारानुसार ओ३म् तीन अक्षरों से मिल कर बना है। अ ऊ और म, अ का अर्थ वैश्वानर भाव जगत के जीवों की जाग्रत अवस्था की आत्मा और ऊ तेजस, से भाव

स्वप्न अवस्था की आत्मा, म प्राग्य से भाव गहरी नींद में सोये हुए आत्मा, ओ३म् वह हस्ती है जो अगम और अगोचर है ।जिस में सारा जगत् समा जाता है । ओ३म् शब्द के लिये संस्कृत में प्रणव अक्षर प्रयोग किया जाता है, ओंकार शब्द वाहिगुरू के अर्थ में गुरू ग्रन्थ साहिब में कई बार आया है । संत भगवान सिंह जी संपरदाई ज्ञानी ने लिखा कि एक निर्गुण रूप परमात्मा है वह ओंकार हुआ सो सत्य है । जिस का तीन काल में नाश नहीं होता, गुरू नानक जी कहते हैं कि:-

एक ओंकार हमारा खावन्द, जिन एह बनत बनाई ।
इस को त्याग और को लागे, नानक सो दुःख पाई ॥

अर्थात–ओंकार परमात्मो ही सारे संसारका एकमात्र स्वामी है जिस ने चराचर जगत को बनाया है, जो उस की उपासना को छोड़ किसी और की भक्ति करता है वह सदा दुःख उठाता है । दशम गुरू गोविन्द सिंह जी जाप साहिब मे लिखते हैं—

ओ३म आदि रूपे, अनादि स्वरूपे ।

यहां ओ३म का अर्थ ज्ञानी शेर सिंह जी ने जगत को उत्पन्न करने वाला किया है और लिखा है कि तू आदि स्वरूप है, इसी लिये तू अनादि स्वरूप है ।

ऊपरोक्त प्रमाणों से साफ सिद्ध है कि दसों सिख गुरु, ओंकार महिमा उसी प्रकार गाते रहे, जिस प्रकार कि दूसरे वैदिक धर्मी महा पुरुष गाते आ रहे हैं । हां नवीन सिखों ने गुरु आशय के विरुद्ध परमात्माका एक नया नाम वाहिगुरु रखा जिस को गुरुओंने अपनी वाणी मेंकभी उचारण नहीं किया था; हां भाटों

की वाणी में मिलता है परन्तु वहां भी भगवान कृष्ण के लिये प्रयोग हुआ है।

दशम गुरू गोविन्द सिंह जी ने जाप साहिब में प्रभु के अनेक नामों का जाप किया है, परन्तु वाहिगुरू नाम कहीं भी नहीं लिखा। यदि वह वाहिगुरू नाम ईश्वर का मानते तो जाप साहिब में अवश्य लिखते। पता नहीं सिख विद्वानों ने इस को क्यों बड़ाई दे रखी है ? जब कि गुरू वाणी ने इस को स्वीकार ही नहीं किया।

ईश्वर महिमा विचार

ऋग्वेद में बतलाया गया है कि वह परमात्मा सर्व व्यापक और अविनाशी है। वह सर्वाधार है जिस में सब देव सूर्य चन्द्र पृथिवी आदि लोक लोकान्तर वास करते हैं। इसी कारण वह प्रभु सब देवों का देव या महादेव कहलाता है। वह शुभ गुण, कर्म स्वभाव युक्त और ज्ञान का स्रोत है। जो मनुष्य उस को नहीं जानते या उलटा जानते और मानते हैं। उस की भक्ति वेदोक्त ढंग से नहीं करते, वह नास्तिक, मन्द बुद्धि, सदा दुःख सागर में डूबते रहते हैं। उस को यथार्थ जान कर ही सब लोग सुखी होते हैं। वेद के आधार पर ही गुरू नानक देव जी ने लिखा कि:—

परमेसर ते भुलियां व्यापन सभे रोग।

(बारामाह माझ म० ५)

अर्थात ईश्वर को भूल जाने, न मानने या गल्त मानने से सब दुःख व्याप्त होते हैं।

प्रश्न—आप इस बात को मानत हैं या नहीं कि वेद में ईश्वर अनेक हैं ?

उत्तर—नहीं मानते, क्योंकि चारों वेदों में ऐसा कहीं नहीं लिखा कि जिस से सिद्ध हो कि ईश्वर अनेक हैं किन्तु यह तो लिखा है कि ईश्वर एक है।

प्रश्न—वेदों में जो अनेक देवता लिखे हैं, उस का क्या अभिप्राय है ?

उत्तर—देवता दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण कहाते हैं। जैसी कि पृथिवी, परन्तु इस को कही ईश्वर व उपासनीय नहीं माना है। यह उन लोगों की भूल है जो देवता शब्द को देख कर वेद में अनेक ईश्वर होने के भ्रम में पड़ जाते हैं।

शत पथ ब्राह्मणमें तेतीस देव कहे है। आठ वसु,दस प्राण और ग्यारहवां जीवात्मा रुद्र देवता कहे जाते है, क्योंकि जब शरीर को छोड़ते हैं तब रोदन कराने वाले होते हैं। संवत्सर के बारह महीने बारह आदत्य देवता क्योंकि यह सब की आयु को लेते जाते हैं। बिजली इन्द्र देवता क्योंकि यह परम ऐश्वर्य का हेतु है। यज्ञ को प्रजापति कहने का कारण यह है कि जिस से वायु वृष्टि जल ओषधि की शुद्धि, विद्वानों का सत्कार और नाना प्रकार की शिल्पविद्या से प्रजा का पालन होता है। यह ऊपर लिखे गुणों के कारण देव कहाते हैं। इन का स्वामी और सब से बड़ा परमात्मा उपास्यदेव है। यदि यह इन शास्त्रों को देखते तो वेदों में अनेक देवता या ईश्वर मानने के भ्रम जाल में न गिरते।

वेद द्वारा ईश्वर सब को उपदेश करता है कि हे मनुष्यो !

गुरु विरजानन्द
सन्दर्भ पुस्त
पु परिग्रहण क्रमांक 5108
दयानन्द महिला महाविद (२४४)

मैं ईश्वर सब से पूर्व विद्यमान सारे जगत का पति, सनातन जगत्कारण और सब धनों का विजय करने वाला और दाता हूँ, मुझ ही को सब जीव, जैसे पिता को सन्तान पुकारती है वैसे पुकारें। मैं सब को सुख देने हारे जगत के लिये नाना प्रकार के भोजनों का विभाग, पालन के लिये करता हूँ। अतः मुझको छोड़ किसी दूसरे की उपासना, पूजा, स्मरण या भक्ति न करो।

इसी सिद्धान्त को मानते हुए गुरू अर्जुन देवजी ने लिखा, कि:—

प्रीति लगी तिस सच सियों मरै न आवै जाए।
ना विछोड़ियां विछुड़ै; सबमें रिहया समाए॥
दीन दरद दुःख भन्जना, सेबक के सत भाए।
अचरज रूप निरंजनो, गुर मिलाईया माए॥१॥
भाई रे! मीत करा प्रभु सोई।
माईया मोह प्रीति धृग, सुखी न दीसै कोई॥१॥रहाओ।
दाना दाता सीलवन्त, निर्मल रूप अपार।
सखा सहाई अति वडा, ऊचा वडा, अपार॥
बालक वृद्ध न जानियै, निहचल तिस दरवार।
जो मंगियै सो पाइयै, निधारा आधार॥२॥
जिस पेखत किल विख हरें, मन तन होवे साँति॥
इक मन एक धिआईयै, मन की लाहे भ्रांति॥
गुण निधान नवतन सदा, पूर्ण जाकी दाति॥
सदा सदा आराधियै, दिन विसरो नहीं राति॥ ३॥
[श्री राग म० ५]

अर्थात- ऐ गुरू सिखो ! हमारी प्रीति तो उस सत्यस्वरूप परमात्मा में लग रही है कि जो न मरता और न कहीं आता जाता है, यदि कोई इस से बिछुड़ना या अलग होना चाहे तो नहीं हो सकता। क्योंकि वह सब के अन्दर और बाहर सर्व व्यापक है, उस का इतना असीम राज्य या जगत है कि संसार का कोई प्राणि या पदार्थ उस से बाहर जा ही नहीं सकता। वह सारे चराचर संसार में एक रस समाया हुआ है, वह दीनों के दुःखों को दूर करने वाला और सेवकों के प्रेम का सच्चा प्रेमी है। उस का रूप या सृष्टिनियम आश्चर्य जनक है। वह माया से रहित निरञ्जन है। सत्य ज्ञान वेद के ज्ञाता गुरू ही उस के मिलने का भेद बतला सकते हैं। ऐ भाईयो ! केवल उसी परमात्मा को ही अपना सखा और मित्र बनाओ। माया के साथ मोह और अनीश्वर के साथ प्यार करना धिकार और निन्दा के योग्य है। क्योंकि ईश्वर को छोड़ दूसरे की भक्ति या उपासना करने वाला कोई भी सुखी दिखाई नहीं देता। प्रभु ज्ञान स्वरूप, दाता और दानी है। वह अनन्त, शीलवन्त; निर्मल और पवित्र है। वह न बालक है न बृद्ध। क्योंकि वह सत्य नाम है इस का दरबार [न्याय नियम] निश्चल और अटल है। उस से जो मांगो मिलता है। क्योंकि वह दाता और सुख प्रदाता है। जिस की आज्ञा को मानने से और दिये ज्ञानानुसार आचरण करने से पाप दूर हो जाते हैं, मन शांत होता है एक चित होकर ध्यान करने से मन की भ्रान्ति या अज्ञान अंधेरा दूर हो जाता है। प्रभु गुणों का भन्डार है। वह सदा नया है, एकरस और परिपूर्ण है, उसकी दया सदा पूर्ण है। ऐ गुरू सिखो ! उसी की सदा अराधना करो। ऐसा न हो कि कभी दूसरे के नाम का जाप करो। और अरदासी करने

लग जाओ, या उस दाता को भुला, दाता के नाम की माला जपने लग जाओ। उसको न दिन भूलो न रात।

ऊपरोक्त शब्दों में गुरू अर्जुन देव जी ने वेदोक्त सिद्धान्त को पूर्ण रूप से स्वीकार किया है। इस लिये जो गुरू सिख, गुरुओं को ईश्वर, या ईश्वर अवतार मानने लग गए हैं, या उस को माता पिता से उत्पन्न मानते हैं, या जो ईश्वर को चौथे या सातवें आकाश या सच्च खन्ड में बैठा जानते हैं, या उस के वेद ज्ञान के विरुद्ध दूसरों की पूजा भक्ति करते और अपने मन माने सिद्धान्त घड़ लेते है। उन को चाहिए कि गुरू बचनानुसार आचरण कर सच्चे गुरू सिख कहलाने के अधिकारी बनें। किसी कवि ने कहा है कि:-

जो विश्वास से करते हैं उसकी भक्ति।
वही जान सकते हैं महिमा को उसकी॥
भला कौन बढ़ कर है परमात्मा से ?
जो रक्षा करे अपनी हर इक बला से ॥
पिता सबका है वह, वही सब की माता।
वह भक्तों को अपने है आन्नद दाता॥
वह है मित्र सबका, वह है सबका बन्धु॥
वह कल्याण कारी है, कृपा का सिन्धु ॥

ईश्वर सर्व व्यापक है

प्रश्न:- ईश्वर सर्व व्यापक है या किसी देश विशेष में

रहता है ?

उत्तर:- सर्व व्यापक ईश्वर है, यदि वह एक देश या एक जगह में रहे सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, सब को वशमें रखने वाला, सबको उत्पन्न करने वाला, सब का सहारा, सबका पालक और संघार करने वाला नहीं हो सकता, क्योंकि जहा कर्ता विद्यमान नहीं वहां कोई कर्म हो नहीं सकता, गुरू वाणी में भी कहा हैकि:-

वासुदेव सर्वत्र मैं ऊन न कितहूँ ठाईं।
अन्तर बाहरि संग है, नानक काए दुराइ ॥

(गौड़ी बावन अखरी म० ५)

अर्थात्— सर्व व्यापक परमात्मा सब जगह बस रहा है। वह अन्दर बाहर हर जगह मौजूद और अंग संग है। नानक जी कहते हैं कि उस को दूर मानना भूल है।

सगल विनस्पति में बैसन्तर, सगल दूध में घीआ।
ऊंच नीच में जोति समानी, घट घट माधो जीआ ॥
सन्तो !घट घट रिहया समाहओ, पूर्णपूर रहियो सरब मे
जल थल रम्या आहओ ॥ (सोरठ म० ५)

अर्थात्— जिस प्रकार ईन्धन में हर जगह अग्नि है और दूध के हर कण में घी है, इसी प्रकार हर छोटी बड़ी वस्तु में समान रूप से प्रभु की ज्योति व्यापक है। वह घट घट वासी है। संसार के अणु अणु में परिपूर्ण है वह जल थल में रम रहा है।

हर जोऊ अन्तर्जामी जान ।

करत बुराई मानुख ते छिपाई, साखी भूत पवान ॥१॥
(सारंग म० ५)

अर्थात- ईश्वरको सर्वान्तर्यामीजानो, अज्ञानी मनुष्य बुराई करके उसे छिपाता है, परन्तु परमात्मा तो भूत प्राणी मात्र का साक्षी है वह हमारे सारे कर्मों को जानता है ।

हुकमै अन्दर सब को, बाहर हुकम न कोए (जपजी)

अर्थात्— सर्व जगत उस के न्याय नियम के आधीन है, एक अणु भी उस की सत्ता से बाहर नहीं ।

वेद के अटल सिद्धान्त और गुरू वाणी के प्रमाण से सिद्ध है कि कार्य कारण का क्रम अटल है; कारण के बिना कार्य हो ही नहीं सकता, कारण को एक ओर करो कार्य समाप्त है । सृष्टि के इन कारणों में आवश्यक कारण ईश्वर है । जिसकी सत्ता इसके कण कण में मौजूद है । यदि एक भारी दूर-बीन लेकर गगन मन्डल को देखा जाय तो खुले आकाश में असंख्य लोक लोकान्तर दिखाई देंगे, जिन में से कई तो हमारी पृथिवी से छोटे और कई बड़े हैं । यह सारे के सारे उस रचनेदार की रचना है । सूर्य चन्द्र नित्रों अर्थात सब वस्तु देवताओं में भी इसी प्रकार जन्म और मृत्यु का क्रम जारी है, वहां भी ईश्वर एक रस व्यापक है । इस पर भी यदि आप और खुली दृष्टि से देखें तो पता लगेगा कि जापान, चीन, जर्मनी, रूस, अमरीका, फ्रांस, इन्गलैंड आदि के निवासी अपने २ नगरों, धर्म मन्दिरों, घरों में बैठ अलग २ सच्चे मन से परमात्मा की

व्यापकता का विश्वास रखते हुए उसकी स्तुति, प्रार्थना, उपासना करते हैं और मानते हैं कि वह निकट से भी निकट होकर हमारी प्रार्थना को सुन रहा है और जो कुछ हम विचारते,कहते या करतेहैं उन सब बातों को वह जानता है और हमारे कर्मों का फल देता है। इसी बात को देख, हम शिक्षा ग्रहण करते हैं कि ईश्वर संसार के अणु २ में व्यापक है और ऐसा मानने में मनुष्यों को अनेक लाभ हैं जिन में से पांच लाभ निम्न है

(१) पहला लाभ इस सिद्धान्त के मानने से यह है कि संसार का हर व्यक्ति चाहे वह किसी देश, जाति या रंग आदि का क्यों न हो प्रभु के जानने, मानने और उसकी उपासना करने का पूर्ण अधिकारी है, कोई एक देश, जाति या वर्ण हो, प्रभु भक्ति का ठेकेदार नहीं।

(२) दूसरा लाभ यह हैं कि इस सिद्धांत के मानने से कपोल कल्पित पैगम्बरों, देवताओं, गुरुओं, फरिश्तों, जिन्नों भूतों आदि की मानता मिट जाती है। जिन के बारे में मत मतान्तरों के अनुयाई यह विचार रखते हैं कि परमात्मा तो किसी देश विशेष में रहता है परन्तु इस संसार का कार्य चलाने के लिये उसने अनेक देवताओं आदि को प्रबन्धक नियत कर रखा है या अपने राज्य की चाबियां इन्हीं के हाथ में दे रखी हैं।

(३) तीसरा लाभ यह है कि इस से अवतार पूजा, मूर्ती पूजा कबर पूना, पुस्तक पूजा, पीर प्रस्ती, दिशा पूजा, इमारत प्रस्ती, गुरु पूजा, हज, तीर्थ, नदी, सरोवरकी पूजा और स्नान महात्म और इन से पापों की मुक्ति आदि अज्ञानता और असत्य विचारों का नाश हो जाता है, जिस से गुरु घंटालों और धर्म के ठेकेदारों की मकारी समाप्त हो जाती है।

(४) चौथा लाभ यह है कि हमारे मन पर ऐसा पवित्र प्रभाव पड़ता है कि जिस से हमें आत्मक स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाती है। हम हर समय उस व्यापक, दयालु, जगत जननी की प्रेम भरी गोद में अपने आप को सुखी पाते हैं। जो कि सब सुखों का भन्डार और हमारी जीवन यात्रा का असली ठिकाना है। इस प्रकार परम पिता परमात्मा हमारी उपासना का एक उपास्य देव बन जाते है।

(५) पांचवा लाभ यह कि हम अपने बुरे विचारों और पाप कर्मों को छोड़ देते है, क्योंकि किसी के देखते या प्रकाश में चोरी या कोई पाप करना कठिन होता हैं, पापी या चोर एकान्त या अन्धेरे में दूसरों की दृष्टि से बच कर ही अपना मनोरथ सिद्ध करने का यत्न करते हैं। यदि मनुष्य सच्चे मन से यह मान ले और निश्चय जान ले कि हमारे मन, वचन और कर्मों के सब भावों को प्रभु देखता है और कि इन का फल हमें अवश्य भोगना पड़ेगा, तो वह अन्धकार में छिप कर भी पाप करने से रुक जाता है। क्योंकि :—

प्रभु जानता सब के अन्दर की बातें।
नहीं चलतीं वहां चालबाज़ी की घातें॥
मगर हां, जिन्हों ने किया अपना तन मन।
अती प्रेम में भर के ईश्वर के अर्पण॥
विषय और विकारों से जो दूर होकर।
मगन रहते हैं प्रेम में उस के दिन भर॥
परमदेव ईश्वर की इच्छा के अन्दर।

नो हैं पूजते ठीक विश्वास रख कर ॥
उन ही की भक्ति है कल्याण कारी ।
वही पाते सुखों की दौलत हैं सारी ॥

ईश्वर दयालु और न्यायकारी है।

प्रश्न—ईश्वर दयालु और न्यायकारी है वा नहीं ?

उत्तर—वह कृपा स्वरूप, दयाका सागर औरसच्चा न्यायकारी है।

प्रश्न—यह दोनों गुण परस्पर विरुद्ध हैं, जो न्याय करे तो दया, और दया करे तो न्याय छूट जाय क्योंकि न्याय उस को कहते हैं कि जो कर्मों के अनुसार न अधिक न न्यून सुख दुःख पहुंचाना, और दया उस को कहते हैं जो अपराधी को बिना दण्ड दिये छोड़ देना !

उत्तर—न्याय और दया का नाम मात्र ही भेद हैं क्योंकि जो न्यायसे प्रयोजन सिद्ध होता हैं वहीं दया से। दण्ड देनेका प्रयोजन यह है कि मनुष्य अपराध करना छोड़दे और दुःखों को प्राप्त न हो वही दया कहाती है, जो दूसरे को दुःखों से छुड़ाना, जैसे दया और न्यायका अर्थ तुमने किया है। वह ठीक नहीं क्योंकि जिसने, जैसा, जितना बुरा कर्म किया हो उस को उतना, वैसा दण्ड देना चाहिए, उसी का नाम न्याय है और जो अपराधी को दण्ड न दिया जाय तो दया का नाश हो जाय, क्योंकि एक डाकू को छोड़ देने से सहस्रों धर्मात्मा पुरुषों को दुःख देना है। दया वही है कि उस डाकूको कारागार में रख कर पाप करने से बचाना, डाकू को मार देने से अन्य सहस्रों पर दया प्रकाशित होता है। इस दण्ड को देखने और सुनने वाले भी शिक्षा ग्रहण कर अपराधों से बचे

रहते हैं। जिस से देश भर का सुधार होता है।

ईश्वर की पूर्ण दया तो यह है कि उस ने प्राणीमात्र के सुख लाभ के लिए संसार में अनन्त सुख की सामग्री उत्पन्न कर दान कर रखी है। पापी से पापी को उस का भोग निरन्तर मिल रहा है। भला इस से बढ़ कर और दया क्या हो सकती है? गोस्वामी तुलसी दास जी ने लिखा है कि:—

"सुत दारा और लक्ष्मी पापी ग्रह भी होय"

अर्थात-ईश्वर ने पापियों को भी सन्तान, स्त्री और धन देकर निहाल कर रखा है। उस का न्याय नियम भी साफ दिखाई दे रहा है कि इन्हीं पदार्थों से मनुष्य कर्मानुसार हानि लाभ उठा रहे हैं। एक तो धन आदि पाकर स्वर्ग सुख भोग रहा है और दूसरा इन ही से दुःखी होकर नर्क की भट्टी में जल रहा है, यह सब कुछ प्रभु के न्याय और दयाका प्रकाश हैं। इस पर गुरू वाणी में लिखा कि:-

रंक राओ जाकै एक समान ॥ कीट हसति सगल पुराण ॥
बीओ पूछ न मसलत धरै॥ जो किछ करै सो आपहि करै ॥
(गौड म० ५)

अर्थात—न्यायकारी प्रभु राजा और रंक का एक समान न्याय करता है, चयूंटी से हाथी तक प्राणी मात्र का एक जैसा पालन होता है। ईश्वर किसीसे पूछ कर न्याय नहीं करता वहां किसी की सिफारश नहीं चलती। किसी साक्षी की आवश्यकता नहीं, वह स्वयं कर्मानुसार कर्म फल दाता है।

सरब जिआ सिर लेख धुरहू, बिन लेखे नहीं कोई जिओ।
आपि अलेख कुदरत कर देखै। हुकम चलाए सोई जिओ॥
(सोरठ म० १)

अर्थात्— प्राणि मात्र अपने कर्मों का फल भोगते हैं, जो न्यायकारी के घुर (घर) से मिलता हैं बिना लेखे या हिसाब के कोई जीव नहीं। परमात्मा आप इस हिसाब से मुक्त है। वह निज शक्ति से सब को नियम में चला रहा है।

प्रश्न—ईश्वर ने किन्हीं जीवों को मनुष्य जन्म, किन्हीं को सिंहादि क्रूर जन्म, किन्हीं को हरिण, गाय आदि पशु, किन्हीं को वृक्षादि, कृमि, कीट पतङ्गादि जन्म दिये हैं, इससे परमात्मा में पक्षपात आता है।

उत्तर—पक्षपात नहीं आता, क्योंकि इन जीवों के पूर्व जन्म वा सृष्टि में किये हुए कर्मानुसार व्यवस्था करने से यह जन्म उन को मिले हैं, यदि कर्म के बिना जन्म देता तो पक्षपात आता।

अब इस सिद्धान्त की पुष्टि में गुरूवाणी के प्रमाण भी देखिये:—

(१) आपे बीजि आपे ही खाह ॥
नानक हुकमी आवे जाह ॥ २० ॥ १ ॥

(२) चंगयाईयां बुरयाईयां बाचे धर्म हदूरि ॥
करमी आपो आपनी के नेड़े के दूरि ॥ २ ॥ (जप जी)

(१) अर्थात- मनुष्य आप ही कर्मों का बीज बोता और आप ही उस के फल खाता है। नानक जी कहते हैं कि ईश्वर के न्याय नियम से वह अनेक जन्म लेता है।

(२) अच्छे और बुरे कर्म प्रभु के दरबार में पढ़े जाते हैं और जैसी अपनी करनी (नेड़े या दूर) इस लोक या पर लोक में, वैसा ही फल मिलता है।

लेख न मिटई पूरबि कमाइया, क्या जाना क्या होसी ॥

(धनासरि म० १)

अर्थात- कर्म फल कोई मिटा नहीं सकता, अवश्य भोगना ही पड़ता है। जीव को पता नहीं कि उस के साथ क्या होगा। क्योंकि कर्म फल प्रभु आधीन है

प्यारे पाठक ! इतना स्पष्ट सिद्धान्त जिस को गुरू वाणी ने भी स्वीकार किया है। गुरू ग्रन्थ में इस के विरुद्ध भी प्रमाण मिलते हैं, जो वेद और स्वयं गुरू ग्रन्थ से उल्ट होने के कारण प्रमाण या मानने योग्य नहीं।

जैसा कि:—

जो जो नाम जपै अपराधी सभि तिन के दोख परहरे ॥
वेसुया रवत अजामल उधरयो, मुख बोलै नारायण नरहरे ॥

(मारू म० ४)

यह गुरू राम दासजी का वचन है, ऐसे ही दूसरे गुरुओं और भक्तों के गुरू ग्रन्थ में अनेक हैं। जिन का भाव भाई गुरू दास जी ने अपनी वारों में खोल कर लिखा है कि:-

अजामल एक पापी और वेश्या गामी पुरुष था। उस वेश्या के गर्भ से छे पुत्र हुए, परन्तु जब सातवां पुत्र उत्पन्न हुआ तो नारद जी के कहने पर उस का नाम नारायण रखा। मरते समय उसने अपने पुत्र को पुकारा उस की पुकार को सुन नारायण (ईश्वर) ने अपने गणों को उस की सहायता के लिये भेजा। वहां जाकर नारायण के भेजे हरि जनों और यम के गणों में झगड़ा हुआ। हरि जनों ने यम के गणों को मार भगाया और

अजामल को वैकुन्ठ में ले गये। इसी प्राकर का एक प्रसंग और गुरु ग्रन्थ में अनेक जगह आया है कि:-

पढ़ सुआ गनका उधरी (म० ४)

सिखों के चौथे, पांचवे गुरू और भक्त लिखते हैं कि एक वेश्या, जिस का सारा जीवन पाप में बीता था, के घर में एक महात्मा जो वर्षा से बचने के लिये ओट देख कर आ गये थे। वेश्या ने उन का सत्कार किया। महात्मा उस की सेवा से प्रसन्न हो गये, मन में दया आ गई। उन्हों ने वेश्या को एक तोता दिया और कहा कि इस को राम नाम पढ़ाया कर। वेश्या ऐसा ही करने लगी। जब मृत्यु का समय आया, यम के जाल टूट गए वह नर्क कुन्ड से बच गई। भगवान के विमान उस को सीधा वैंकुन्ठ में ले गये। क्योंकि नारायण का नाम पापों का नाशक है।

प्यार पाठक ! क्या नारायण, पापी के अन्तःकरण के भाव को नहीं जानते थे ? क्या ईश्वर को इतना भी पता न चला, कि अजामल तो अपने पुत्र को पुकार रहा है या वेश्या पाप करती हुई भी तोते को केवल राम नाम रटाया करती है ? क्या यही उस का न्याय है कि वह अपना नाम सुन कर ही पाप क्षमा करदे। जो ऐसा ही नाम का महात्म्य है तो आज कल भी नारायण स्मरण करने वालों को दुःखों से क्यों नहीं छुड़ाते या कैदी लोग नारायण कह कर क्यों जेल से छूट नहीं जाते ?

इसी प्रकार के कई और प्रसंग गुरू ग्रन्थ में हैं जो वेदादि सत्य शास्त्रों और स्वयं गुरूओं के वचनों के विरुद्ध हैं। इस लिये

अज्ञान भरी बातों का मानना अधर्म, पाप और अन्याय है।

ईश्वर निराकार है या साकार ?

प्रश्न– ईश्वर निराकार है या साकार ?

उत्तरः–ईश्वर निराकार है। यदि साकार हो तो सर्वव्यापक नहीं हो सकता। जब व्यापक न हो तो सर्वज्ञादि गुण भी ईश्वर में नहीं घट सकते। क्योंकि परिमित वस्तु के गुण, कर्म स्वभाव भी परिमित रहते हैं। यदि वह साकार हो तो शीतोष्ण, भूख, प्यास रोग, दोष, जन्म, मृत्यु से रहित नहीं हो सकता। इस लिये यही सत्य सिद्धान्त है कि ईश्वर निराकार है यदि साकार हो तो उस के नाक, कान, आंख आदि का बनाने वाला कोई दूसरा होना चाहिये। अज्ञानी मनुष्यों ने ईश्वर को साकार मान कर इसे अपने हाथों से घड़ना और उत्पन्न करना आरम्भ कर रखा है। गुरू वाणी में अनेकों प्रमाण हैं, जिन में ईश्वर को निराकार माना है जिन में कुछ एक निम्न हैं:—

पूर्ण पूरि रिहया दिनु राती॥ (मारू न० ५)

अर्थात–, वह निराकार प्रभु सब जगह और हर समय व्यापक है।

मरै न बिनसै आवै न जाये।
नानक सद ही रिहया समाये ॥३॥(सुखमनी म० ५)

अर्थात—वह न मरता है और न उस का नाश है, नानक जी कहते हैं कि वह निराकार सब जगह और सदा व्यापक है।

अलख अभेव पुरख परताप (सुखमनी म० ५)

अर्थात:—परमात्मा अलख, निराकार, अजन्मा, व्यापक और सर्व शक्तिमान है ।

सरब कला भरपूर प्रभ बिरथा जानन हार ॥
जा कै सिमरण उधरीयै, नानक तिस बलिहार ॥

(सुखमनी म० ५)

अर्थात:—निराकार प्रभु सब जगह भरपूर है, सब के अन्दर की जानने वाला है । जिस के स्मरण से ही मनुष्यों का उद्धार होता है उस पर ही मैं बलिहार हूं ।

सो अन्तरि सो बाहरि अनन्त ॥
घट घट व्यापि रिहया भगवन्त ॥
धरनि माहि आकास पयाल, सरब लोक पूर्ण प्रतिपाल ॥

(सुखमनी म० ५)

अर्थात— वह ईश्वर अन्दर, बाहर घट घट व्यापक है । वही पृथिवी, आकोश, पाताल और लोक लोकान्तर में, सब का पालन कर रहा है । परन्तु इस के उल्ट गुरू मत दर्शन नामी पुस्तक में ज्ञानी भागसिंह ने लिखा कि ईश्वर है तो निराकार परन्तु नामदेव धन्ना आदि भक्तों के प्रेम और निश्चय के कारण साकार भी हो जाता है जैसा कि मरी गऊ को जीवित करना, ठाकुरजी का दूध पी लेना, बढ़ई का रूप धर नाम देव का छप्पर बांधना, सैन नाई बन कर राजा की सेवा करना, धन्ने भक्त की खेती करना, उस की लस्सी और रोटी खा लेना । गन्ने चूसना असम्भव बातों को उस

निराकार ने प्रेमी भक्तों की कामना पूर्ण करने के लिये सम्भव कर दिखाया।

आपे ही वे प्रभु राखता भगतन की आनि ॥
जो जो चितवहि साध जन सो लेता मानि ॥

(बिलावल म० ५)

इस गुरू वाकानुसार वाहिगुरू का अटल नियम है।

समाधान- प्यारे पाठक! गुरू नानक जी ने परमात्मा को सतनाम लिखा है अर्थात उस का नाम या गुण कर्म स्वभाव अटल है तो फिर अपने अटल गुणों और नियमों को त्याग वह निराकार से साकार क्यों बना?

ऐसी दो रंगी चालें वेद, शास्त्र और बुद्धि के विरुद्ध हैं इस लिये बुद्धिमान लोग इसे स्वीकार नहीं करते।

ईश्वर सर्व शक्तिमान है

प्रश्न- ईश्वर सर्व शक्तिमान है या नहीं?

उत्तर:— है, परन्तु जैसा तुम मानते हो वैसा नहीं।

सर्व शक्तिमान का यह अर्थ है कि ईश्वर अपने काम अर्थात उत्पति, पालन, संघार आदि और सब जीवोंके पुण्य पाप की यथायोग्य व्यवस्था करने में किंचित भी किसी को सहायता नहीं लेता अर्थात अपने अनन्त सामर्थ्य से ही अपना सब काम पूर्ण कर लेता है।

प्रश्न.— हम तो ऐसा मानते हैं कि ईश्वर चाहे सो करे क्योंकि उस के ऊपर दूसरा कोई नहीं।

उत्तर – वह क्या चाहता है ? जो तुम कहो कि वह सब कुछ चाहता और कर सकता है तो हम तुमसे पूछते हैं कि ईश्वर अपने आप को मार, अनेक ईश्वर बना, स्वयं मूर्ख हो, चोरी, व्यभिचारादि पाप कर्म कर सकता और दुःखी भी हो सकता है या नहीं ? जैसे यह काम ईश्वर के गुण कर्म और स्वभाव के विरुद्ध हैं और वह कभी नहीं करता तो, जो तुम्हारा कहना है कि वह सब कुछ कर सकता है, यह कभी घट नहीं सकता, अतः हमारा अर्थ ठीक है। जब एक सन्सारी राजा अपने बनाए कानून को नहीं तोड़ता और यदि तोड़े तो न्यायकारी और बुद्धिमान नहीं कहला सकता, तो भला सच्चा न्यायाधीश परमात्मा जो सर्वज्ञ और ज्ञान स्वरूप है अपने नियमों को कैसे तोड़ सकता है ? इसी भूल में पड़ कर लोगों ने मान लिया और गुरू ग्रन्थ में भी लिख दिया कि:-

कबीरा ते नर अन्ध हैं गुरू को समझे और।
हरि रूठे गुरू ठौर है, गुरू रूठे नहीं ठौर।

अर्थात—वह लोग अज्ञानी हैं जो गुरू को कुछ और समझ बैठे हैं। गुरू तो परमात्मा से भी बड़ा है क्योंकि यदि परमात्मा रूठ जाये तो गुरू सिर पर खड़ा है और गुरू रूठ जाये ती फिर सिख का कोई ठिकाना नहीं, यह है गुरू ग्रस्तों का उल्टा सिद्धान्त, मानों इन के गुरूओं के संकेत पर प्रभु और इनके संकेत पर गुरु अपने न्याय नियम को तोड़ देता है। इसी लिए तो यह लोग सर्व शक्तिमान का अर्थ यह मानते हैं कि जो चाहे सो करे। निम्न प्रमाणों से पता चलेगा कि परमात्मा किस प्रकार इनके इशारों पर चलता और इनकी मन इच्छा के काम करता हैं। मैकालिफ साहिब के सिख इतिहास में, जन्म साखी के आधार पर लिखा है कि एक

बार गुरु नानकजी के दर्शनों को बड़ी संगत आ गई साथ ही वर्षा होने लगी तब गुरू पुत्रों ने कहा कि हम इतनी जनता को भोजन कैसे करा सकेंगे ? गुरु जी बोले कि इस कीकर वृक्ष पर चढ़ जाओ और इसे जोर से हिलाओ। गुरु पुत्रों ने कहा, पिता जी वृक्ष हिलानेसे पत्ते कांटे और फलियां तो गिरेंगी, भोजन तो गिरेगा नहीं तब गुरु जी ने लैहणा (अंगद) जी को कहा वह शीघ्र ही वृक्ष पर चढ़गया और बड़े जोड़ से हिलाया। बस फिर क्या था। देशी मिठाई के ढेर लग गए। सारी संगत ने पेट भरकर खाई, बहुत सी बच भी रही। जनता गुरु नानक जी और अंगद जी की महिमा गान करने लगी।

आगे चलकर एक घटना लिखी कि गिरधारी नामी गुरु के सिख की सन्तान न थी वह गुरु अमर दास जी के पास गया, परन्तु गुरु जी ने कहा कि तू नाम जप और भले काम कर, वाहिगुरु की इच्छा पर राजी रह। सन्तान के लिये मारा मारा न फिर, क्योंकि यह बन्धन का कारण है। गिरधारी निराश हो, घर को लौटा। रास्ते में भाई पारो नामी गुरु का सिख मिला। उस ने जब माजरा सुना तो बोला ! जा, तेरे हां पांच पुत्र होंगे।

पांच वर्षों में ही गिरधारी के पांच पुत्र पैदा हो गए। गिरधारी पांचों को साथ ले गुरु दर्शनों को आया। गुरूजी ने पूछा, सन्तान कैसे प्राप्त की ! तब गिरधारी ने हाथ जोड़ कर कहा, महाराज ! आप के सेवक भाई पारो की कृपा और सिफारश से मिली हैं। गुरु जी बोले, शाबाश ! भाई पारो ! तू ईश्वर के न्याय नियम को बदल सकता है, यह शक्ति हम में नहीं।

भाई पारो ने नम्रता से कहा, महाराज जब मैंने एक प्रेमी

सिख को आप के दरबार मे खाली जाते देखा तो अटूट भन्डार से इस को दात दे दी।"

इस प्रकार की अनेक गाथाएँ है जिन को सत्य सिद्ध करते हुए मतवादी लोग परमात्मा के बारे में कह दिया करते हैं, कि जो चाहे सो करे, परन्तु याद रखो। जो न्याय नियम से काम नहीं करता या जो उल्टी सीधी बातें करता है, उस को पागल तो कहा जा सकता है, ईश्वर नहीं। अतः सर्वशक्तिमान का अर्थ जो ऊपर किया गया है वही ठीक है।

स्तुति, प्रार्थना, उपासना

प्रश्न—ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिए वा नहीं।

उत्तर—करनी चाहिए।

प्रश्न—क्या स्तुति आदि करने से ईश्वर उस मनुष्य के पाप क्षमा कर देगा? यदि नहीं तो फिर स्तुति प्रार्थना आदि क्यों करें?

उत्तर—उनके करने का फल दूसरा है। अर्थात स्तुति से ईश्वर में प्रीति के गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण कर्म स्वभाव का सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से पर ब्रह्म से मेल और उसका साक्षातकार होना। प्रमाण के लिये गुरु ग्रन्थ का आदि शब्द जिस को सिख मूलमन्त्र मानते है। पढ़ो:—

एक ओंकार, सति नामु कर्ता पुरखु निरभौ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सै भंग गुर प्रसादि॥ (जपजी)

इस के शब्द में इक ओंकार, सत नाम, कर्ता पुरुष, सगुण स्तुति और निरभय, निरवैर, अकाल, अमूर्त और अजूनी निर्गुण स्तुति हैं। इस का भाव यह है कि जैसे ईश्वर के गुण हैं वैसे अपने अन्दर धारण करना सच्ची स्तुति है।

परमात्मा न्यायकारी दयालु, कृपालु है, वैसे ही न्याय दया और कृपा को स्वयं धारण करना असली प्रभु भक्ति है और जो केवल भांड की तरह परमात्मा के गुण गाते जाना, तदानुसार आचरण न करना, बगुला भक्ति है, जिस का कोई लाभ नहीं। गुरु राम दास जी ने कहा है। कि:—

हिरदै कपट नित कपट कमावहि, मुखों हरि हरि सुनाये,
अन्तर लोभु महा गुबारा, तोह कूटै दुःख खायें ॥४॥
(सारंग म० ४)

अर्थात— जिन के मन में कपट भरा हुआ है जो नित्य कपट कमाते हैं, मुख से तो प्रभु नाम का जाप करते हैं, परन्तु मन में मोह का महा अन्धेरा भरा है, वह तो मानो अनाज का छिलका कूट कर अर्थात दुख ही खाते हैं।

गुरु ग्रन्थ में इस सत्य सिद्धान्त के विरुद्ध भी लिखा मिलता है। जैसे नाम देव की कथा जिस का खुलासा भाई गुरदास जी ने दसवी वार में किया है, कि नाम देव का पिता किसी काम के लिये जब बाहिर जाने लगा तो नाम देव को कहा कि मेरे पीछे ठाकुर जी की सेवा करना, दूध आदि पिलाना। वह चला गया तो नाम देव स्नान कर, कपला गऊ का दूध निकाल कर, ले आया। फिर ठाकुर जी को स्नान करा, चरणामृत तैयार किया, तिलक चढ़ाया और हाथ जोड़ प्रार्थना

करने लगा कि ऐ गोविन्द राए ! दूध पीओ। जब निश्चय कर सेवा की तो पत्थर से ठाकुर जी ने दयाल हो कर दर्शन दिया। भक्त ने दूध पिला दिया।

नाम देव पर ठाकुर इतने दयाल थे कि मरी गऊ को जिआया, उन का टूटा छप्पर बांधा आदि कई काम किये, क्यों-कि परमात्मा अपने भक्तों के कहे अनुसार ही करता है। एक और कहानी सुनिये:-

एक ब्राह्मण (पत्थर की) पूजा किया करता था। पास ही धन्ना भक्त अपने पशु चराता। धन्ने ने इस चरित्र को देखा तो ब्राह्मण से इस का कारण पूछा। ब्राह्मण ने बताया कि ठाकुर पूजा से मन मांगे पदार्थ मिलते हैं। भक्त बोला, एक ठाकुर तो मुझे भी दे कि मैं भी उस की पूजा करूं। ब्राह्मण ने अपना पीछा छुड़ाने के लिये कपड़े में एक पत्थर लपेट कर दे दिया, धन्ना उस को घर ले आया। प्रातः स्नान करा लस्सी और रोटी उस के आगे धरी और हाथ जोड़ कर प्रार्थना की कि ठाकुर जी महाराज ! भोग लगाईये। जब पत्थर कुछ हिला जुला नहीं तो भक्त बोला, ठाकुर जी ! क्या आप रूठ गए। जब तक आप न खायेंगे तब तक मैं भी कुछ न खाऊँगा। धन्ना जब हठ कर बैठ गया तो भगवान ने साक्षात दर्शन दिये। भक्त से रोटी लेकर खा ली और छाछ का कटोरा पी लिया। भोले भक्त का अति प्रेम देख ठाकुर उस का कुआं चलाने लगा और खेतों में भी सहायता करने लगा। देखिये ! एक ओर तो गुरू वाणी कह रही है कि: —

रूप न रेख न रंग किछु, त्रह गुण ते प्रभु भिन्न ॥
तिसहि बुझाये नानका, जिस होवै सुप्रसन्न ॥
(गोड़ी सुखमनी म० ५)

अर्थात-वह परमात्मा निराकार है, उस का न रूप है और न रंग वह रज, तम सत् रूपी माया से अलग है नानक जी कहते है, । कि इस सत्य सिद्धान्त का उस को ज्ञान होता है, जिस पर प्रभु की अति कृपा होती है। और दूसरी ओर भगवान भक्तों का बन्धा हुआ अपने नियम छोड़ साकार बन भक्तों के कटोरों से दूध और लस्सी पी रहा और रोटी खा रहा है। यह दोनों परस्पर विरोधी बातें गुरु ग्रन्थ में अनेक जगह मिलती हैं।

सृष्टि कर्ता परमेश्वर

प्रश्नः—सब लोग मानने हैं कि ईश्वर ही संसार का कर्ता है। अब जब ईश्वर के हाथ, नाक, कान, आंख आदि अंग नहीं तो उस ने इन साधनों के बिना संसार को कैसे बनाया ?

उत्तरः—शास्त्र और तुलसी रामायण में लिखा है कि परमेश्वर के हाथ नहीं, परन्तु अपनी शक्ति रूप हाथ से सब का रचन गृहण करता है, पैर नहीं परन्तु व्यापक होने से सब से अधिक वेगवान है, चक्षु का गोलक नहीं परन्तु सब को यथावत देखता, श्रोत्र नहीं, तथापि सब की सुनता, अन्तः करण नहीं परन्तु सब जगत को जानता है। उस को अवधि सहित जानने वाला कोई नहीं। उसी को सनातन, सब से श्रेष्ठ, सब में पूर्ण होने से पुरुष कहते हैं। गुरु राम दास जी ने कहा कि:—

जदहु आपे थाट कीया बहि करतै, तदहु पुछ न सेवक बीया॥
तदहु क्या कोई लेवै क्या को देवै, जां अवर न दूजा कीया
फिर आपे जगत उपाइया करतै, दान सभनां को दीया....

... आपि नरंकार आकार है आपे, आपे करै सो थीया॥७॥

(वार बिहागड़ा म० ४)

अर्थात्— जब परमात्मा इस जगत की रचना करने लगा. तो उस ने किसी सेवक से नहीं पूछा, न सहायता ली। जब उस समय कुछ उत्पन्न ही न था तो तब कोई ले और दे नहीं सकता था। फिर प्रभु ने जगत उत्पन्न किया और भोग पदार्थ दान किये वह आप निराकार है उस ने निज शक्ति से आकार बनाये, उस के करने से ही सब कुछ हुआ।

ईश्वर अवतार

प्रश्न:—ईश्वर अवतार लेता है वा नहीं ?

उत्तर—नहीं क्योंकि "अज एक पात" "स पर्यगाच्छ-क्रमकायम्" यह यजुर्वेद के वचन हैं, जिस से सिद्ध है, कि परमेश्वर जन्म नहीं लेता।

प्रश्न—फिर लोगों ने उस के अनेक अवतार क्यों मान रखे है ?

उत्तर— वेद ज्ञान को न जानने से, मतवादी लोगों के बहकाने से और स्वयं ज्ञान में कोरे होने से अविद्या के कूप में गिरे हैं।

प्रश्न—यदि परमात्मा अवतार न ले तो कंस, रावण आदि पापियों का नाश कैसे हो

उत्तर— प्रथम तो जो जन्म लेगा कह अवश्य मरेगा। जो ईश्वर शरीर धारण के बिना ही जगत की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय करता है उस के सामने कंस, रावणदि एक कीड़ी के समान भी नहीं, जब चाहे उन का नाश कर दे। भला सर्वशक्तिमान को एक क्षुद्र जीव

के मारने के लिये जन्म मरन युक्त कहना मूर्खपन नहीं तो और क्या हैं ? यदि कहो कि भक्तों के उद्धार के लिये जन्म लेता है, तो भी ठीक नहीं, क्योंकि जो भक्त जन ईश्वर आज्ञा में चलते हैं उन का उद्धार तो वह करता ही है। यदि हम सृष्टि में ईश्वर के कर्मों का विचार करें तो उसके सदृश न कोइ है और न हो सकता है। युक्ति से भी ईश्वर का अवतार सिद्ध नहीं होता, जैसे कोई अनन्त आकाश को कहे, कि गर्भ में आया तो यह सच नहीं हो सकता क्योंकि आकाश अनन्त और सब में व्यापक हैं। वैसे ही परमात्मा का आना जाना नहीं हो सकता। क्या परमात्मा गर्भ में व्यापक नहीं था जो कहीं से आया ? और बाहर नहीं था जो भीतर से निकला। ऐसा विचार बुद्धि हीनों के सिवा और कौन कर सकता है। अब जो लोग परमात्मा का अंश अवतार मानते हैं उनको अखन्ड परमात्मा के टुकड़े मानने पड़ेंगे। अब रहा सम्पूर्ण अवतार, यदि सारा परमात्मा एक गर्भ या शरीर में आ गया तो असीम एक देशीय हो गया और वह सर्वव्यापक न रहा। अब सारे संसार का प्रबन्ध कौन करे। इस का परिणाम तो सर्व नाश होगा। गुरू बाणी में परमात्मा को " सत नाम" कहा है अर्थात वह सदा एक रस रहता है, घटता बढ़ता नहीं तो फिर अवतार कहां से और कैसे लेता है ? गुरू नानक जी लिखते हैं कि:—

एकम एकंकार निराला, ॥
अमर अजोनी जाति न जाला।
अगम अगोचर रूप न रेखया,
खोजत खोजत घटि घटि देखया॥
(बिलावल म० १)

अर्थात:-ओंकार परमात्मा एक अनूपम और निराला है वह अमर, अजर और अजोनी है उसकी न जाति पाति न देश विशेष है वह अगम अथाह और इन्द्रियों से परे है उस का रूप है न रेख, जिन महा पुरुषों ने उस की खोज की, उन्हों ने उस को सब जगह व्यापक पाया। अब शोक इस बात का है कि इस सत्य सिद्धान्त को गुरू ग्रन्थ में स्वीकार कर इस के विरुद्ध ग्रन्थ साहिब में ही इस का अवतार लेना भी अनेक जगह माना है जैसा कि गुरू अमर दास जी ने लिखा है कि:—

"खिन मे भैयान रूप नकसिया थम उपाडि"
(भैरों म० ३)

अर्थात्- राक्षस को मारने और प्रह्लाद की रक्षा करने को ईश्वर डरावना रूप धार, एक क्षण में थम को फाड़ कर निकल आया। इसी प्रकार वामन अवतार ने राजा बली को ठग लेना, कृष्ण अवतार को विदुर का सादा भोजन स्वीकार करना, भक्त सुदामा को धर्म अर्थ काम मोक्ष चारों पदार्थ देना, बैणी भक्त के घर राजा बन कर आना, सैन की जगह नाई बन राजा की सेवा करना, अहिलया का उद्धार आदि अनेक प्रसंग गुरू ग्रन्थ में लिखे मिलते है। यहां तक कि गुरू वाणी और भाट बाणी में सिख गुरूओं को भी ईश्वर अवतार सिद्ध किया गया है। जैसा कि—

पार ब्रहम पूर्ण ब्रहम गुरू नानक देव ॥ १ ॥
गुरू नानक देव गोबिन्द रूप ॥ (बसन्त म० ५)

प्रमाण तो अनेक हैं, पुस्तक बढ़ने के भय से नमूना मात्र लिखे हैं। भाव यह कि गुरू वाणी में अवतार वाद का खन्डन

और मन्डन दोनों पक्ष पाये जाते हैं।

मूर्ति पूजा

सत्यार्थ प्रकाश में नानक पन्थ पर महर्षि ने लिखा कि:— नानक पन्थी (सिख) "मूर्ति पूजा तो नहीं करते किन्तु उस से विशेष ग्रन्थ की पूजा करते हैं। क्या यह मूर्ति पूजा नहीं ? किसी जड़ पदार्थ के सामने सिर झुकाना वा उस की पूजा करना सब मूर्ति पूजा है। जैसे मूर्ति वालों ने अपनी दुकान जमा कर जीवका बना रखी है वैसे इन लोगों ने भी कर ली है। जैसे पुजारी लोग मूर्ति का दर्शन कराते, भेंट चढ़वाते हैं वैसे नानक पन्थी लोग भी ग्रन्थ की पूजा कराते, भेंट भी चढ़वाते हैं।"

मूर्ति पूजा का अर्थ है ईश्वर को छोड़ किसी दूसरे की चाहे वह जड़ हो या चैतन, की उपासना करना अर्थात किसी नदी तालाव, बावली, मकान, मढ़ी, मसान, मकबरा, पुस्तकादि, मूर्तिमान, किसी शरीर धारी को परमात्मा जान, उस की पूजा भक्ति करना, मूर्ति पूजा है जो वेद विरुद्ध होने से महा पाप है।

सिखों में पहले गुरू नानक आदि की मूर्ति बनाने लग गए थे, परन्तु खालसा दीवान के प्रचार से बन्द हो गई। सिखों के घरों में फरेमों में जड़े फोटो दिखाई देते हैं जिस पर फूल मालायें चढ़ाई जाती और सिर झुकाया जाता है। गुरू द्वारों में सब जगह गुरू ग्रन्थ की पूजा की जाती है और इस के सम्मुख अरदास या प्रार्थना की जाती है। जब किसी सिख के घर पाठ के लिये स्वारा साहिब जाता है तो गुरू ग्रन्थ पर चंवर झुलाते, नंगे पाव आगे जल छिड़कते और शब्द गाते ले जाते हैं, जिन में कहा जाता है कि सतगुरु सिख का कार्य सफल करने जा रहे हैं और जब

वापस लाते हैं तो शब्द गाते हैं कि सतगुरू अब अपने घर जा रहे हैं।

पहले आरती के समय थाल में दीपक रख गुरू ग्रन्थ की आरती उतारी जाती थी परन्तु अब सब में नहीं किसी २ गुरूद्वारों में पहला नियम चल रहा है। आम गुरूद्वारों में "गगन मय थाल रवि चन्द दीपक" आदि वाली आरती खड़े हो कर पढ़ी जाती हैं गुरूग्रन्थ को भोग कड़ाह प्रसाद (हलवे) का लगाया जाता हैं, चढ़ावे से पहले इसको कृपान भेंट की जाती है। गुरूग्रन्थके हजूर खड़े हो कर अरदास की जाती है, कि तेरी संगत या अमुक सिख ने अमुक कार्य की सिद्धि के लये कड़ाह प्रसाद और रूमाला आदि पदार्थ भेंट किये हैं, कड़ाह प्रसाद की देग हाजर है इस का आप को भोग लगे और शीत प्रसाद (पीछे बचा) साध संगत को मिले फिर इस में से कुछ प्रसाद अलग रख ग्रन्थ साहिब का रूमाल उठा प्रार्थना की जाती है कि:—

काम क्रोध अरु लोभ मोह, विनसि जाये अहंमेव ॥
नानक प्रभ सरणागती, करि प्रसादु गुर देव ॥ १ ॥)
(गौड़ी सुखमनी म० ५)

फिर प्रसाद जनता में बांटा जाता है, परन्तु पहले पांच प्यारों को मिलता है।

मूर्ति मही आ दि जड़ पदार्थों की बनती है, इसी प्रकार पुस्तक या ग्रन्थ छापा खानों में कागज सियाहीदि से छप कर तैयार होते हैं। बन चुकने के बाद ही यह देवता या गरू बन जाते हैं, मूर्ति पुरानी होकर टूट जाती और पस्तक फट जाती है। इस

लिये इस को अजर अमर नहीं कह सकते और न ही यह उपास्य देवबनने के योग्य हो सकते हैं। चालाक लोग मूर्ति, पुस्तक आदि जड़ पूजा चला भोले भाले लोगों को ठग रहे हैं। इन पर चढ़ावा चढ़ा और माल पदार्थ ले मौज उड़ाते हैं। दसों सिख गुरूओं, भक्तों और विद्वानों ने अनीश्वर पूजा का सदा खन्डन किया है। गुरूवाणी में भी आया है कि:—

देवी देवा पूजियै भाई, क्या मांगो क्या देह ॥
पाहन नीर पखालिये भाई, जल में बूढे तेह॥ ६॥
(सोरठ म० १)

अर्थात- जिन मूर्तियों को वा व्यक्तियों को लोग देवी और देव समझ कर पूजते हैं, उपासक उन से क्यो मांगते हैं? और वह इन को दे भी क्या सकते हैं, पत्थर को अनेक वार जलमें नहलाओ तो भी वह डूबेगा ही। साथ ही पुजारी और भक्त को भी ले डूबेगा।

अन्धे गुंगे अन्ध अन्धारु ॥
पाथर ले पूजें मुग्ध गवार॥
(वार बिहागड़ा म० १)

अर्थात- अकल के अन्धे वाणी के गुंगे लोग या अज्ञानी लोग मूर्खता भरी बातें करते और अज्ञान मार्ग पर ठोकरें खाते हैं वह मूर्ख गंवार पत्थरों की मूर्ति ले ईश्वर की जगह इन की पूजा करते हैं।

भरमि भूले अज्ञानी अन्धले, भ्रमि भ्रमि फूल तोरावै ॥
निरजीओ पूजे, मड़ा सरेवह, सभ बिरथी घाल गवावै ॥ ३॥
(मलार म० ४)

अर्थात—भ्रम में भूले अन्धे अज्ञानी लोग फिर फिर कर फूल तोड़ लाते हैं, जड़ पूजा करते, कबरों और मढ़ियों से वर मांगते हैं। इन की सारी करी कराई वृथा जाती हैं।

स्वामी रामानन्द जी, कबीर आदि अनेक भक्तों के जिन के बचन गुरु ग्रन्थ में हैं, के गुरु थे, आप लिखते हैं।

जहां जाईयै तह जल पखान
तू पूरि रिहयो है सब समान ॥ [बसन्त रामा नन्दजी]

अर्थात—जल और पत्थर तो मन्दिरों से बाहर भी जहां जाओ मिल जाते हैं और उन में भी परमात्मा विद्यमान है। ऐ प्रभु ! तू इस संसार में एक रस भरपूर और व्यापक है।

इस विषय पर दशम गुरु गोविन्द सिंह जी के वचन :—

पाए परो परमेसर के जड़, पाहन में परमेसर नाहीं ॥ ९९ ॥
[वचित्र नाटक]

ऐ जड़ बुद्धि लोगों ! परमेश्वर की शरण मे जाओ। इन पत्थरों पर जड़ पदार्थ में ईश्वर बुद्धि न रखो।

पखाण पूजहों नहीं ॥ न भेख भी जहों कहीं ॥
अनन्त नाम गाए हों ॥ परम पुरुख पाएहों ॥ ३५ ॥व०नाटक)

दशम गुरु डंके की चाटे से कह रहे हैं कि मैं पत्थर पूजक नहीं और न किसी भेख या मजहबी निशान को धर्म मानता हूं मैं तो अनन्त परमात्मा का नाम लेवा और गुण गान करने वाला हूं। उस परम पुरुष की भक्ति का इच्छुक हूं।

काहे को पूजत पाहन को, कछु पाहन में परमेसर नाहीं ॥

ताह का पूज प्रभु करक, जो पूजत हो अघ ओघ मिटाई ॥

(स्वये पा० १०)

ओ भोले ! किस लिये पत्थर पूज रहा है, पत्थर की पूजा इश्वर पूजा नहीं, उसी भगवान की उपासना कर, कि जिस की भक्ति से तेरे पाप और ताप दूर हो जायें। भाई गुरु दास गुरु ग्रन्थ के लिखारी और गुरु घर के महा विद्वान जिन की वाणी गुरु ग्रन्थ की चाबी मानी जाती है। ईस बारे में लिखते है कि,—

किसे पुजाई सिला, सुन कोई गोरी मढ़ी पुजावै।
तन्त्र मन्त्र पाखन्ड कर, कलह क्रोध बहु वाद वधावे ॥
आपो धापी होय कै, न्यारे न्यारे धर्म चलावै।
कोई पूजै चन्द्र सूर, कोई धरति आकाश मनावै ॥
पौन पाणी बैसन्तरो, धर्म राज कोई तृपतावे।
फोकट धर्मी भ्रम भुलावै ॥ १८ [वारभाई गुरदासजी १]

अर्थात–कोई तो पत्थर पूजा कर रहा है और कोई कबरों और मढ़ियों का पुजारी है, आपो धापी मचा अलग २ मत चला रखे हैं, कोई सूर्य और चांद को पूज रहा हैं तो कोई पृथिवी और आकाश को मना रहा है, कोई वायु और अग्नि का पुजारी है तो कोई धर्म राज का। इन बेकार मतों ने संसार को भ्रम के गढ़े में गिरा रखा है।

याद रहे कि सिख साहित्य में जहां मूर्ति पूजा से इन्कार है वहा इस का मण्डन भी है जैसा कि भक्त नाम देव, धन्ने चु और सैन आदि भक्तों के प्रसंग पीछे लिख के हैं।

इसी पर श्री जी० बी० सिंह ने लिखा कि सिख लोग यदि जीते जी हरद्वार न भी जायें, मर कर तो निन्नानवे प्रति शत वहां पहुंचते हैं। हिन्दुओं वाले अड़सठ तीर्थ तो इन्हों ने छोड़े नहीं, साथ अनेकों तालाब और बावलियां बढ़ा ली हैं और तीर्थ यात्रा का विचार अब भी पापों का धोना और परलोक का संवारना होता है, मन का खोट गंवाना, सदाचार का बनाना या संसार की भलाई, इसका प्रयोजन नहीं होता। अपनी मुरादें दूध पूत लक्ष्मी अवश्य मांग ली जाती हैं, किसी जगह नहा कर, दर्शन पा कर या पाठ पूजा करके या मुरादें मांग कर किसी गूढ़े रंग से मिल जातीं, मान ली जाती है।

प्रश्न— गुरु ग्रन्थ का आदर मूर्ति पूजा नहीं यह तो उस में गुरु जी के देह (शरीर) की भावना है, उस का सत्कार है क्योंकि गुरु ग्रन्थ हमें गुरुवाणी द्वारा उपदेश करता हैं ?

उत्तर— भावना भी सच्ची होनी चाहिए। मट्टी में सोने की, पत्थर में हीरे की, जल में घी की, धूल में मैदा की भावना करने से यह पदार्थ प्राप्त नहीं हो सकते, लोग दुःख की भावना नहीं करते; सुख की करते हैं, परन्तु भावना पूरी नहीं होती। अन्धा आंखों की भावना कर देख नहीं सकता। इसी प्रकार अनपढ़ मनुष्य भावना से ग्रन्थ नहीं पढ़ सकता, इस के लिये किसी गुरु या अध्यापक से पढ़ना पड़ता है। किसी भी पाठशाला में लड़कों को केवल पुस्तकें पढ़ाती नहीं देखी गई। श्री दर्शन सिंह आवारा ने एक कविता लिखी थी, जिस का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार हैं:—

कुछ भेंट चढ़ा कर, इक पैसा धर कर,

अरदास सुना कर, इक सजदा करके ।
कुछ रख के मिठाई, कुछ धर के न्याजें,
कुछ रोजे रख कर, कुछ पढ़ के निमाजें ।
दो फूल चढ़ा कर, इक पाठ रखा कर,
इक बांग सुना कर, कुछ नांतें गा कर ।
तू बेटे पोते बहु दौलत मांगे,
तू हूरै अप्सरा सुख स्वर्ग का मांगे ।
तू दुलहन चाहे, तू मान भी मांगे,
तू बंगले कोठी और सेहत मांगें
तू चाहे तरक्की व्यापार में बढ़ती,
धन माल खज़ाना ठेके और धरती ।
पापों पर परदा, अपराध मुआफ़ी,
न्याय न चाहे, तू बे इन्साफी ।
कर भेंट पताशे, चाहे बनना करोड़ी,
लाखों ही मांगे दे धेला कौड़ी ।
न हाथ हिलाये, न पांव हिलाये,
मूर्ति से मांगे, गुरुद्वारे जाये ।
तू ठग की भांति चाहे लूट मचाना,
ईश्वर को धोके से चाहे भुलाना ।
ईश्वर से करता, छल छिद्र की बातें
वह घट घट वासी, जाने सब घातें ।

वह सर्व व्यापक और अंतर यामी,
वह जाने तेरा पाखन्ड तमामी।
तज और की पूजा, ले प्रभु सहारा,
तब भव सागर से हो पार उतारा ॥

हमारा निश्चय है कि जयों जयों वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार और सत्य ज्ञान का बिस्तार होगा, त्यों त्यों अज्ञान भरी बातों से सिख सज्जनों को इन्कार होगा।

ईश्वरी ज्ञान वेद

जो स्वयंभू सर्व व्यापक, शुद्ध, सनातन, निराकार परमेश्वर है, वह सनातन जीव रूप प्रजा के कल्याणार्थ आदि सृष्टि में ही पथावत रीति मे वेद द्वारा सब विद्याओं का उपदेश करता है।
(यजु० अ० ४० मं०८)

प्रश्न— जब आप ईश्वर को निराकार मानते हैं तो वेद विद्या का उपदेश बिना मुख के वर्णोच्चारण कैसे हो सका होगा ?

उत्तर— परमेश्वर सर्व शक्तिमान और सर्व व्यापक है। अतः उस ने अपनी व्यापति से बिना मुखादि के उपदेश किया। जब हम बिना मुख और जीभ के हिलाये मन में अनेक बातों का विचार और शब्दोच्चारण कर सकते हैं तो ऐसे परमात्मा भी जीवों को अन्तर्यामी रूप से उपदेश करता है। जब परमेश्वर निराकार, सर्वव्यापक है तो अपनी सारी वेद विद्या का उपदेश जीवस्थ स्वरूप से जीवात्मा में प्रकाशित कर देता है। इस लिए ईश्वर में यह दोष नहीं आ सकता।

प्रश्न— किन के आत्मा में और कब वेदों का प्रकाश किया।

उत्तर—सृष्टि के आदि में परमात्मा ने, अग्नि, वायु, आदित्य तथा अङ्गिरा इन चार ऋषियों के आत्मा में एक २ वेद का प्रकाश किया।

प्रश्न—उन चारों में ही वेद का प्रकाश किया, दूसरों में क्यों नहीं, इस से तो ईश्वर पक्षपाती होता है ?

उत्तर—वह चार ही सब जीवों से अधिक पवित्रात्मा थे, इस लिये उन्हीं में पवित्र ज्ञान का प्रकाश किया।

प्रश्न—किसी देश भाषा में वेदों का प्रकाश न करके संस्कृत में क्यों किया ?

उत्तर—यदि किसी देश भाषा में प्रकाश करता तो ईश्वर पक्षपाती हो जाता, वेद भाषा संसार भर की भाषाओं का कारण है, उसी में वेदों का प्रकाश हुआ।

गुरु ग्रन्थ में भी इसी प्रकार लिखा है कि:—

सेव सकि आपि उपाये कै कर्ता आपे हुकम वरताये

(राम कली आनन्द म०३)

अर्थात—आत्मा और प्रकति तो सृष्टि रूप में उत्पन्न कर के ईश्वर आप ही अनादि वेद आज्ञा का प्रकाश करता है। फिर कहा:—

सबदि सूर जुग चारे ऊधो, वाणी भगति वीचारी ॥२३॥

(रामकली म० १)

अर्थात— शब्द या सत्य ज्ञान वेद, चारों युगों के लिये सूर्य वत है। वेद वाणी में भक्ति का पूर्ण विचार है। फिर कहा—

सबद दीपक वरतै तिह लोए ॥

जो चाखै सो निर्मल होए॥ (धनासरी म०-३)

अर्थात्—ईश्वरी ज्ञान वेद तीनों लोकों के लिये दीपक या प्रकाश है। जो इस पर आचरण करेगा वह निर्मल पवित्र और पाप रहित हो जायेगा।

हरि सिमरन कर भक्त प्रगटाये, हरि सिमरनि लगि बेद उपाये ॥
(गौड़ी सुखमनी म० ५)

अर्थात-ईश्वर स्मरण से भक्तों ने ऋषि पदवी प्राप्त की और ईश्वर भक्ति के प्रभाव से उन पर वेदों का प्रकाश हुआ था।

ज्ञानी नारायण सिंह जी ने भी इस शब्द का टीका करते हुए लिखा कि हरि स्मरण से ऋषियों ने वेद बनाये।

प्रश्न—वेद ईश्वर कृत हैं अन्य कृत नहीं, इस में क्या प्रमाण ?

उत्तर—जैसा ईश्वर पवित्र, सर्व विद्यो-वित, न्यायकारी आदि गुण वाला है वैसे जिस पुस्तक में ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसोर कथन हो, वही ईश्वर कृत है अन्य नहीं जैसा ईश्वर का निर्भ्रम ज्ञान, वैसा जिस पुस्तक में भ्रन्ति रहित ज्ञान हो; इस प्रकार के वेद हैं।

प्रश्न—वेद को ईश्वर से होने की कोई आवश्यकता नहीं क्योंकि क्रमशः ज्ञान बढ़ाते जाकर लोग वेद पुस्तक भी बना सकते हैं ?

उत्तर—कभी नहीं बना सकते। जैसे जङ्गली मनुष्य सृष्टि को देख कर भी विद्वान नहीं बन सकते। जब उन को कोई शिक्षक मिल जाय तो विद्वान हो जाते हैं। इसी प्रकार परमात्मा, आदि सृष्टि में यदि ऋषियों को वेद विद्या न पढ़ाता और वह दूसरों को न पढ़ाते तो सब लोग अविद्वान ही रह जाते। जैसे किसी बच्चे को

जन्मसे ही एकान्त देश, अविद्वानों या पशुओं के संग रखें, तो वह जैसा संग होगा वैसा ही हो जायगा। भेड़ियों की मांद मे पले हुए लड़के जब अनाथालयों में लाये गए; तो वह बिलकुल पशुवत ही थे। अतः मनुष्य को भाषा और ज्ञान परमात्मा ने ही दिया है। इस अर्थ सहित भाषा को वेद; शब्द या सत्य ज्ञान भी कहते हैं। जैसा के गुरू वाणी में आया है, कि:—

सभि नाद बेद गुर बाणी। (रामकली म० १)

अर्थात-ईश्वर की दी हुई भाषा (नाद) और सत्य ज्ञान (वेद) गुरू की वाणी है. परमात्मा ही आदि गुरू और गुरूओं का भी गुरू है। प्रि. जोध सिंहजी लिखते हैं कि "सिद्धों के प्रश्नके उत्तर में सदा रहने वाले ज्ञान को गुरू नानक जी ने अपना गुरू बतलाया था यह ज्ञान भी नाम की तरह सर्व व्यापक है" गुरू नानक जी कहते हैं कि:—

गुर के सबद तरे मुनि केते, इन्द्रादिक ब्रहमादि तरे॥
सनक संनन्दन तपसी जन केते, गुर परसादी पारि परे॥
(भैरों म० १)

अर्थात—गुरू के शब्द या ईश्वर के वेद ज्ञान से कितने ही ऋषि मुनि तर गए। इन्द्र, ब्रह्मा जैसे तर गए सनक, सनन्दन जैसे तपस्वी अनेकों गुरु(ईश्वर) की कृपा से पार हो गए।

गुरू नानक जी ने फिर कहा:—

भाई रे! गुर बिन ज्ञान न होई॥
पूछो ब्रहमे, नारदै, बेद ब्यासै कोई॥१॥
(श्री राग म० १)

अर्थात्–हे भाईयो ! बिना गुरूके ज्ञान नहीं होता, जो लोग कहते हैं कि क्रम से मनुष्य ज्ञानी बन जाते हैं वह भूल में है। ब्रह्मा, नारद, वेद व्यास आदि प्राचीन विद्वानों से पूछो, तो यही उत्तर मिलेगा कि सब से पहला गुरू परमात्मा है तत्पश्चात गुरू शिष्य का क्रम आज तक चलता आया और अन्त तक चलेगा।

दशम गुरू गोबिन्द सिंह जी ने चण्डी चरत्रि में लिखा:–

आदि, अपार, अलेख, अनन्त, अकाल, अभेख, अलख, अनाशा।
कै शिव शक्ति दिये श्रुति चार रजो तम सत्य तिहों पुर वासा॥

अर्थात्–वह आदि गुरू परमात्मा जिस का कोई वारपार नहीं, जो अलेख और अनन्त है, जो मृत्यु से रहित, रंग रूप से न्यारा, अलख और नाश रहित है, जो सदा एक रस रहने वाला अजर और अमर है। जिस ने आत्मा और प्रकृति को कार्य रूप में लाकर चारों वेदां का प्रकाश किया। वही परमात्मा रज; तम, सत्य रूपी संसार में व्यापक हो रहा है।

प्रश्न—क्या ईश्वरी ज्ञान के बिना मनुष्य जीवन उद्देश्य तक नही पहुंच सकता ?

उत्तर—नहीं ! जैसे सूर्य प्रकाश के बिना आंख पूरा २ कार्य नहीं कर सकती इसी प्रकार हमारी बुद्धि ईश्वरी ज्ञान वेद भानु के बिना पूरा काम नहीं कर सकती, यह चांद; दीपक या बिजली के प्रकाश में काम करती तो है; परन्तु अपूर्ण और फिर यह चांद आदि भी तो सूर्य से ही प्रकाश लेते हैं। अतः असली प्रकाश सूर्य का ही है। इस प्रकार सत्य ज्ञान का स्रोत वेद ही है।

गुरू नानक देव ने जी इस सिद्धान्त की पुष्टि मे कहा:–

नौ, सत, चोदह; तीनि, चारि करि महलति चारि वहाली

चारे दीवे चहुँ हथि दीये, एका एका वारी ॥१॥
महरवान मधु सूदन माधौ ऐसी सक्ति तुम्हारी ॥१॥
(बसन्त हिन्डोल म० १)

अर्थात—नव खन्ड, सात द्वीप, चौदह भवन, तीन लोक और चार दिशाओं रूपी सृष्टि का महल परमात्मा ने बनाया, तब उस बल के भन्डार ने चार दीपक या ज्ञान सूर्य रूपी चार वेद चार ऋषियों को दिये, एक एक वेद एक ऋषि के हृदय में प्रकाशित किया। नानक जी कहते हैं कि हे दयालु परमेश्वर तेरी ऐसी विचित्र शक्ति है।

इस शब्द का अर्थ सिख विद्वानों की समझ में नहीं आता, कई एक ने तो यह कह कर पीछा छुड़ाना चाहा कि गुरु की वाणी अगम है, परन्तु जब उन को कहा गया कि जब गुरु वाणी अगम है तो गुरुओं ने सिखों के ज्ञानार्थ क्यों उचारण की ? दूसर जब आप लोग यह कहते हैं कि वेदादि सत्य शास्त्रों और संस्कृत विद्या का समझना उस समय कठिन हो गया था, इस लिये लोगों की मोटी बुद्धि देख कर गुरुओं ने सरल भाषा में उपदेशार्थ इस वाणी को रचा, तो फिर अगम वाणी का उचारण क्यों किया ? तब उन को कोई उत्तर बन नहीं आता।

अब और प्रमाण देखिये:—

ओंकार ब्रहमा उतपति ॥ ओंकार किया जिनि चिति ॥
ओंकार सैल जुग भये ॥ ओंकार बेद निर्मये ॥
ओंकार सबद उधरे ॥ ओंकार गुरमुख तरे ॥
(रामकली म० १)

अर्थात— ओंकार ने ब्रह्मा को उत्पन्न किया जिस ब्रह्मा ने ओंकार का चिन्तन किया, ओंकार से सृष्टि उत्पन्न होकर युगों की गणना हुई, ओंकार ने वेदों का प्रकाश किया, ओंकार से शब्द या सत्य ज्ञान का विस्तार हुआ, ओंकार उपासना से (गुरमुख) ईश्वर भक्त तर गए।

चौथि उपाये चारे बेदा, खाणी चारे बाणी भेदा ॥

(बिलावल म० १)

अर्थात-परमात्मा ने चारों वेदों का प्रकाश किया, चार प्रकार के प्राणी या योनियां और वाणी के भेद बनाये।

चवे चारि वेद जिनि साजे, चारे खाणी चारि जुगां।

(आसा म० १)

अर्थात—उस परमात्मा ने चारों वेदों को साजा या प्रकाशित किया,चार प्रकार के प्राणी उत्पन्न कर समय को चार युगों में बांटा या विभाग किया।

ओंकार उत्पाती ॥ किया दिनस सभ राती ॥

वण, तृण, तृभवण पाणी ॥ चारि बेद चारे खाणी ॥

(मारू म० ५)

अर्थात—ओंकार ने जगत उत्पन्न किया, फिर दिन और रात्रि को बनाया। वृक्ष और बनस्पति को उगाया। तीन लोक और जल आदि पदार्थ बनाये। मनुष्यों के ज्ञानार्थ चार वेद और चार प्रकार के प्राणी बनाये।

हरि आज्ञा होये बेद, पाप पुण्य बीचारिया।

[मारू म० ५]

अर्थात-परमात्मा की आज्ञा से ही वेद प्रकाशित हुए, जिन में पाप पुण्य का या धर्म और अधर्म का विचार है।

चारे वेद होये सच्चयार ॥ पढ़े गुणे तिन चार वीचार ।
(आसा म० १)

अर्थात—चार वेद ही सत्य ज्ञान के भन्डार हैं। अतः मनुष्य इन चारों को विचार पूर्वक पढ़े और उनपर आचरण करे।

माईआं माई त्रै गुण प्रसूति जमाइया ॥
चारे बेद ब्रहमे नो फरमाइया ॥
(मारू म० ३)

अर्थात—परमात्मा ने तीन गुणों वाली प्रकृतिसे या माया से संसार उत्पन्न किया और ब्रह्मा को चारों वेदों द्वारा उपदेश दिया।

दीवा बलै अन्धेरा जाए ॥ बेद पाठ मति पापां खाए ॥
उगवै सूर न जापै चन्द ॥ जह ज्ञान प्रगास अज्ञान मिटन्त ॥
बेद पाठ संसार की कार ॥ पढ़ पढ़ पण्डित करे बीचार ॥
बिन बूझे सब होये खुवार ॥ नानक गुरमुख उतरसि पारि ॥१॥
(सूही म० १)

अर्थात- दीपक जलने पर जैसे अन्धकार दूर हो जाता है सूर्य चढ़ने पर जिस तरह चन्द्र दिखाई नहीं देता, इसी प्रकार वेद ज्ञान का प्रकाश होने पर अज्ञान अन्धेरा मिट जाता है, वेद का पढ़ना तो संसार भर की कार या कर्तव्य है, विद्वान पण्डितों के कर्तव्य है कि वेदार्थ का विचार करें, बिना वेदार्थ विचार के सब दुःखी रहते हैं। नानक जी कहते हैं कि गुरुमुख, ज्ञानी या

वेद ज्ञान पर आचरण करने वाले ही संसार सागर से पार होते हैं।

असंख ग्रन्थ मुखि वेद पाठ ॥ (जपजी)

अर्थात—धर्म के असंख्य ग्रन्थ हैं, जिन में वेद का पढ़ना पढ़ाना मुख्य है।

वाणी ब्रह्मा वेद धर्म दृढ़ो, पाप तजाया बलराम जिओ ॥
। (सुही म० ४)

यह शब्द सिखों के आनन्द कारज या विवाह संसकार में पेहली लावां या फेरे के समय पढ़ा जाता है, जिसमें कहा, कि ब्रह्मा की वाणी वेद धर्म पर दृढ़ रहो, इससे सब पाप रद्द हो जायेंगे।

वेदां में नाम उत्तम सो सुने नाहीं, फिरें ज्यों बेतालिया ॥
कहै नानक जिन सच तजिया, कूड़े लागे तिनी जनम जूए हारिया
॥ १६ ॥ (रामकली म० ३ आनंद)

अर्थात-वेदों में नाम या ईश्वरीय सत्य ज्ञान या गुण कर्म स्वभाव का बखान बड़े उत्तम ढंग से है, उस को तो तू सुनता नहीं, बेताल या पागल की भांति भटक रहा है, नानकजी कहते हैं जिन लोगों ने सत्य को छोड़ा, वेद ज्ञान से मुंह मोड़ा, और झूठ में लग गए, उन्होंने मानो मानव जन्म को जुए में हार दिया।

वेद वख्यान करत साधू जन भागहीन समझत नहीं खलु ॥
(टोडी म० ५)

अर्थात—साधु या भले मनुष्य वेदों का व्याख्यान करते हैं,

परन्तु मूर्ख भाग्यहीन लोग समझते ही नहीं ।

चार पुकारहि ना तू मानहि ॥ खटु भी एका बात बखानहि ॥
(रामकली म० ५)

अर्थात–हे हठधर्मी ! चार वेद तुझे पुकार २ कर समझा रहे हैं, परन्तु तू मानता ही नहीं, छे शास्त्र भी वेदानुसार एक ही बात या धर्म का व्याख्यान दे रहे हैं ।

वेद पुराण जास गुण गावत ताको नाम हिये में धर रे ॥
(गौड़ी म० ६)

अर्थात—वेद पुराण आदि धर्म ग्रन्थ जिस परमात्मा के गुण गान करते हैं । हे मानव ! तू भी उस का नाम अपने हृदय में बसा ले ।

वेद पराण पढ़े को एह गुण सिमरे हरि को नामा ॥१॥
(गौड़ी म० ६)

वेदादि धर्म ग्रन्थों के पढ़ने और सुनने का यह गुण या लाभ है कि मनुष्य परमात्मा के नाम का स्मरण करें ।

कल मैं एकु नामु कृपा निधि जाहि जपं गति पावैं ॥
और धर्म ता कै सभि नाहनि एह बिधि बेद बतावैं ॥२॥
(सोरठ म० ६)

अर्थात—इस युग में कृपानिधान परमात्मा का नाम ही ऐसा है कि जिस के जाप से मनुष्य की गति है, इस के बराबर और कोई धर्म नहीं, इस प्रकार वेद ने विधि बतलाई है ।

वेद पुराण स्मृति के मति सुनि निमख न हिये बसावै ॥
पर धन पर दारा सियू रचियो बिरथा जन्म सिरावैं ॥ १ ॥
(सोरठ म० ६)

अर्थात— वेद पुराण और स्मृति के सत्य सिद्धातों को सुन कर भी तू एक क्षण अपने हृदय में जगह नहीं देता, दूसरों के धन और स्त्रीयों में आसक्त हो रहा है, जिन में अपने अनमोल जन्म को नष्ट कर रहा है।

ऊपरोक्त चार शब्द दशम गुरु गोबिन्द सिंह जी के पिता शहीद धर्म गुरु तेग वहादुर जी के हैं उन के इस विषय में और भी अनेक शब्द हैं।

बेद कतेब कहो मत झूठे, झूठा जो न बिचारै ॥

(प्रभाती कबीर जी)

अर्थात- वेदादि को झूठा न कहो, झूठा तो वह है जो इन का बुद्धि से विचार नहीं करता।

दशम गुरु गोबिन्द सिंह जी की वाणी आदि ग्रन्थ साहब में नहीं, उन की वाणी दशम ग्रन्थ में है। अतः उनकी वाणी के निम्न प्रमाण हैं! यथाः-

अहो गुण गावत वेद सुनो तुम, रूप न रंग लखयो कछु जाई।

अर्थात—हे मनुष्यो सुनो! वेद प्रभु के गुणों का गान कर रहा है कि उसका न रंग और न रूप लखा जाता है।

वेद जपे जहे को तहे जाप सदा करिये ॥

अर्थात— जिस परमात्मा का जाप जैसे वेद करता है वैसे ही उसको सदा जाप करना चाहिये।

नहीं वेद प्रमाण है, मत भिन्न भिन्न बखान हैं

अर्थात-परन्तु अज्ञानी लोग वेद को प्रमाण ही नहीं मानते

और भिन्न २ प्रकार के मतों का बखान या प्रचार करते हैं।

कहुं न पूजा कहु न अर्चा, कहु न श्रुति धुनी स्मृति न चर्चा।
कहुं न होम, कहुँ न दानम, कहुँ न सयंम, कहुँ न स्नानम

(कलकी अवतार दशम ग्रन्थ)

अर्थात— खेद है कि आज कहीं सच्ची पूजा नहीं और न कहीं उपासना है, कहीं वेद पाठ नहीं और न शास्त्र चर्चा है न कहीं हवन है और न दान, न हीं सयंम है न स्नान।

अब कुछ सिख विद्वानों के प्रमाण लिखे जाते हैं, भाई गुरु दास जी अपनी पहिली वार में लिखते हैं कि जब युग गर्दी या उल्टा समय आता है तो :-

निन्दया चालै वेद की समझन नहीं अज्ञान गुबार।
वेद ग्रन्थ गुर हट है, जिस लग भवजल पार उतारा ॥१७॥

ऐसे समय में लोग वेद की निन्दा करने लग जाते हैं। अज्ञान अन्धकार में सचाई को समझ नहीं पाते, वेद ग्रन्थ तो गुरु हट या ज्ञान की निधि है, जिन पर आचरण करने से मनुष्य संसार सागर से पार उतरते हैं।

भक्त वाणी में एक शब्द आया है कि :-

जाके निगम दूध के ठाटा ॥ समुन्दु बिलोवन को माटा ॥
ताकी होय बिलोवन हारी ॥ क्यों मेटैगो छाछि तुहारी ॥

(सोरठ कबीर जी)

इस का अर्थ सम्प्रदाई ज्ञानी संत भगवान सिंह जी ने यों किया कि "जिस परमेश्वर के चार वेद, दूध का ठाट या गऊ रूप

है, सत्संग रूपी समुन्द्र मटका है, हे जीव ! तू उस के बिलोने वाला बन तो किस तरह तेरी छाछ मिटेगी, अर्थात अबल तो तुझे सिद्धान्त रूपी माखन की प्राप्ति होगी नहीं तो व्यवहार रूपी लस्सी तो कहीं गई ही नहीं" बाबा काका सिंह जी बेदी ने अर्थ किया कि "जिस अकाल पुरुष के घर वेद रूपी दूध की सामग्री है और संसार सागर जिस के मथने की चाटी है, तू उस के मथने वाली, हो, कौन तेरी छाछ गिरायेगा।।

प्यारे पाठक! ईश्वरी ज्ञान वेद के पक्ष में गुरुवाणीके और भी अनेकों प्रमाण हैं, परन्तु इनसे ही सिद्ध है कि दसों सिख गुरु वैदिक धर्मी थे।

गुरु गोविन्द सिंह जी विचित्र नाटक में साफ लिखते हैं कि:-

जिनै बेद पठयो सो बेदी कहाये।
तिनै धर्म के कर्म नीके चलाये ॥

अर्थात— हमारे जिन बड़ों ने काशी में जा कर वेद पढ़े थे उनका नाम वेदी हुआ था, उन्हों ने वेदानुकूल पवित्र कर्म किये।

उन बेदीयन की कुल विखे परगटे नानक राय ॥

अर्थात—उस वेदी वंश में गुरू नानक जी का जन्म हुआ और इसी सूर्य वंश में उन्हों ने अपना जन्म भी लिखा। परन्तु आज उन के नाम लेवा वेद धर्म से दूर भाग रहे हैं।

पाप क्षमा

प्रश्न- ईश्वर अपने भक्तों के पाप क्षमा करता है व नहीं।

उत्तर- नहीं, यदि पाप क्षमा करे तो न्यायकारी न रहे और

मनुष्य महा पापी हो जायें। जैसे राजा पाप क्षमा कर दे तो जनता उत्साह पाकर बड़े २ पाप करने लगे। इस लिये सब कर्मों का फल यथावंत देना ही ईश्वर का काम है, क्षमा करना नहीं।

गुरु ग्रन्थ में भी लिखा है कि—

सभु को आखै आपना, जिसु नाहीं सो चुन कढिये ॥
कीता आपो आपना, आपे ही लेखा संढिये ॥
(आसा म० १)

अर्थात—सब मतवादी यह कहते हैं कि परमात्मा केवल हमारे मत का है। मुसलमान कहते हैं कि वह मोमनों का है, इसाई कहते हैं कि ईश्वर हमें ही मुक्त करेगा। इसी प्रकार सारे मत वादी ईश्वर को अपना पक्षपाती मानते हैं। गुरु जी ने दावे से कहा कि कोई ऐसा प्राणी बताओ कि जिसका वह परमात्मा न हो अर्थात वह प्राणी मात्र का एक समान पिता और सहायक है। उस की प्रजा या सन्तान जैसे कर्म करती है उस न्यायकारी से वैसा ही फल पाती है।

नानक अगै सो मिलै जि खटे घाले देइ ॥ १ ॥ (आसा म० १)

अर्थात— मनुष्य जो कमाई करता, है उसी का फल परलोक में पाता है।

जित कीता पाईयै आपणा सा घाल बुरी क्यों घालियै ॥
(आसा म० २)

इस पर प्रि० तेजा सिंह एम० ए लिखते हैं कि जब हमने अपनी करनी आप ही भरनी है तो बुरा काम क्यों करें।

आपे बीजि आपे ही खाहु ॥ नानक हुकमी आवहु जाहु ॥२०॥

(जपजी)

अर्थात- मनुष्य आप बोता और आप ही खाता है, नानक जी कहते हैं कि फल दोता तो परमात्मा है उसी के न्याय नियमानुसार आता जाता या जन्मों को धारण करता है।

परन्तु इस सत्य सिद्धान्त के विरुद्ध भी गुरुवाणी में शब्द पाये जाते हैं कि:—

धन धन राजा जनक है, जिन स्मरण किया विवेक ।

एक घड़ी के सिमरणे पापी तरे अनेक॥

इसका भाव बतलाते हुए भाई गुरुदास जी अपनी दसवीं बार में लिखते हैं कि राजा जनक बड़ा भक्त हुआ, वह बड़ा गुरु-मुख और माया से उदास था, एक दिन वह सुख-से रहने वाली सभा और गण गन्धर्वों को ले देवलोक को चला, रास्ते में यमपुरी आई जहां नरक निवासी दुःख से हा हा कार कर रहे थे उन का करुणा नाद सुन राजा यमपुरी चला गया और धर्म राज को कहा इन सब को छोड़ दिया जाये, धर्मराज बोला कि यह मेरे वश का नहीं, क्यों मैं तो अविनाशी ठाकुर जी का सेवक हूं, हां जमानत पर छोड़ सकता हूं राजा ने एक प्रभु नाम जमानत में रखा, उस को जब तराजु के पलड़े पर रखा गया तो इतना भारी निकला कि पापियों के सारे पाप उस के पासंग भी न थे। फल यह हुआ कि सबको छोड़ दिया गया। सारा नरक खाली हो गया।

इसी प्रकार:—

गोतम नारि अहिल्या तारी

(माली गौड़ी नामदेव जी)

गुरु ग्रन्थ के भाव पर वार २३ में लिखा है कि दशरथ अपने पुत्र राम का नाम लेकर सर्वण और उसके माता पिता की मृत्यु या तीन हत्याओं के पाप से छूट गया और रामजी के पांव छूते ही शिला रूपी अहिल्या तर गई।

इसी प्रकार के गुरु ग्रन्थ के आधार पर सिख साहित्य में अनेक प्रमाण हैं जो वेदोक्त सिद्धान्त के विरुद्ध हैं।

वेद मत यह है कि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है परन्तु इन कर्मों का दुःख सुख रूपी फल परमेश्वर के आधीन है। परमेश्वर पवित्र और धार्मिक होने से किसी जीव को पाप करने की प्रेरणा नहीं करता अतः जीव जैसा बोता है वैसा फल पाता है।

ईश्वर और जीव का स्वरूप

प्रश्न-जीव और ईश्वर का स्वरूप गुण, कर्म और स्वभाव कैसा है।

उत्तर- दोनों चेतन रूप हैं, स्वभाव दोनों का पवित्र, अविनाशी और धार्मिकता आदि है। परन्तु परमेश्वर का सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति प्रलय सब को नियम में रखना, जीवों को पाप पुण्यों के फल देना आदि धर्म युक्त कर्म हैं और जीव का सन्तानोत्पति, उनका पालन, शिल्प विद्यादि अच्छे बुरे कर्म हैं। ईश्वर के नित्य ज्ञान, आनन्द अनन्त बल आदि गुण हैं और जीव के इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, प्रयत्न, ज्ञान, यह गुण हैं और वैशेषिक में प्राण, अपान, (निमष) आंख मीचना (उनमष) आंख खोलना निश्चय स्मरण और अहंकार करना,

चलना, इन इन्द्रियों का चलाना, भूख, प्यास, द्वेष शोकादि युक्त होना जीवात्मा के यह गुण परमात्मा से भिन्न हैं, उन्हीं से आत्मा की प्रतीति होती है। जीव और परमात्मा का विज्ञान गुणों द्वारा होता है। अर्थात परमात्मा के जीवात्मा से विशेष गुण हैं। अतः जीव और ईश्वर का भेद है, दोनों एक नहीं, गुरु वाणी में वेदानुकूल निम्न प्रमाण है:-

मेरा मेरा करि बिललाही ॥मरणहार एह जीअरा नाही ॥३॥
(गौड़ा म० ५)

अर्थात- मरने पर लोग मेरा मेरा करके चिल्लाते हैं परन्तु यह जीवात्मा मरने वाला नहीं, केवल इस का शरीर से वियोग होता है, जीव का शरीर से अलग होना ही मृत्यु है। फिर कहा:-

ओह बैरागी मरै न जाइ, हुकमे बाधा कार कमाइ ॥
(आसा म० ५)

अर्थात- आत्मा शरीर से अलग पदार्थ है, न यह मरता और न कहीं संसार से चला जाता हैं। यह तो ईश्वर के न्याय नियमानुसार जन्म मरण के चक्कर में काम करता है।

प्रि० जोध सिंह जी एम० ए० लिखते है कि सतगुरु जो का कथन है कि शरीर नाश हो जाता है, परन्तु, जो शरीर में बस रहा है वह (आत्मा) इसके साथ नाश नही होता। आगे लिखा कि:- "आत्मा क्या है?" कई कहते हैं कि आत्मा ब्रह्म(ईश्वर) है। गुरु साहिब यह नहीं मानते कि जीवात्मा जिस अवस्था में है यह ब्रह्म है। नरंकार ने इसको अपनी ज्योति से उत्पन्न किया है। यह ब्रह्म रूप हो सकती है, असला(स्वभाव)एक होने से नरंकार से मिल सकती है, परन्तु नरंकार पूरा है और जीव ऊरा या

कम और जब नरंकार में लीन होगा तो भी नरंकार बेअन्त रहेगा (गुरुमत निर्णय पृ० ४१)

तू पूरा हम ऊरे होछे, तू गोरा हम होरे ॥

(सोरठ म० १).

परमात्मा पूर्ण सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ है परन्तु जीवात्मा अल्प शक्ति और एक देशी है।

समीक्षा—श्री जोध सिंह जी यह मानते हैं कि आत्मा का नाश नही होता तो साफ़ सिद्ध हुआ कि वह अनादि है। जब अनादि सिद्ध हो गया तो यह भी स्पष्ट हो गया कि परमात्मा ने उसको नहीं बनाया, न अपनी ज्योति से और न किसी और पदार्थ से प्रभु ने इस का शरीर के साथ संयोग किया जिसका नाम उत्पति है और आत्मा का शरीर से वियोग होता हैं; तो उस को मृत्यु कहते हैं आत्मा तीन काल प्रभु से भिन्न सत्ता हैं। गुरुवाणी में लिखा भी है:-

संजोगु विजोगु दुई कार चलावह
लेखे आवह भाग ॥ (जपजी)

अर्थात— ईश्वर के न्याय नियमानुसार आत्मा का शरीर से संयोग और वियोग होता है और कर्मानुसार इस का भाग्य यां किस्मत बनती है।

हां! आत्मा ब्रह्म रूप इस प्रकार होता है जैसे लोहा अग्नि में पड़कर अग्नि रूप हो जाता है, परन्तु रहता तो लोहा ही है। इसी प्रकार आत्मा परमात्मा की उपासना में लीन होकर ब्रह्म रूप हो जाता है परन्तु अपनी सत्ता को खो नही देता।

जैसा कि गुरू अर्जुन देव जी ने लिखा कि:-

एका संगति इकत ग्रह बस्ते मिलि बात न करते भाई ।।
एक बस्त बिन पंच दुहेले ओह वस्तु अगोचर ठाई ।।२।।
(गौड़ी पूर्वी म० ५)

अर्थात- व्याप्यव्यापक भाव से आत्मा और परमात्मा दोनों सृष्टि रूपी घर में एक साथ रहते हैं, दोनों पुरुष या व्यापक हैं, परन्तु परमात्मा परम पुरुष है और वह जीवात्मा में भी व्यापक है परमात्मा तो पांच विषयों से अलग है वह सृष्टि रूपी वृक्ष के फलों का भोग नहीं करता अतः मुक्त स्वभाव है। जीवात्मा प्रकृति को भोगता है इस लिए जन्म मरण के चक्कर में आता है। दोनों अगोचर हैं परमात्मा सदा मुक्त और जीवात्मा मुक्ति का इच्छुक है।

गुरू वाणी के ऊपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध है कि जीव और ब्रह्म में भेद है, परन्तु सिख विद्वान गुरु वाणी का सत्य भाव न समझ कर जीवात्मा को परमात्मा की अंश या उसकी जात मानते हैं जो सर्वथा असत्य है इस पर आगे विचार होगा।

तीन अनादि पदार्थ

प्यारे पाठक ! जब हम विचार करते हैं तो पता चलता है कि आठ सिद्धान्त ऐसे हैं कि जिन पर मतमतान्त्रों के क्षेत्र में मतभेद हैं।

(१) पहला सिद्धान्त जिसने संसार को टुकड़े २ कर रखा है वह यह है कि ईश्वर नाम की कोई सत्ता है भी या नहीं।

(२) दूसरा ईश्वर की संख्या का कि वह एक है या अनेक

(३) तीसरा ईश्वर के स्थान का अर्थात ईश्वर कहां रहता है सातवें या चौथे आकाश पर, सच खंड में या क्षीर समुन्दर में, स्वर्ग में या बैकुंठ में या काशी में या काबा में, गुरु नगरी के हरि मन्दिर में या तरणतारण में, गिरजा में या मसजिद, गुरुद्वारे में।

(४) चौथा यह कि ईश्वर कर्मों का फल कैसे देता है मुनकर नकीर द्वारा, या चित्रगुप्त और धर्म राज द्वारा मुरशद, पैगम्बर देवता या गुरूकी सिफारश पर या यसूमसीह पर ईमान लाने से।

(५) पांचवां यह कि ईश्वर ने संसार को कैसे बनाया। अभाव से, भाव में ले आया या ॐ शब्द के कहने से, इच्छा मात्र से या अनादि प्रकृति से।

(६) छटा यह कि आत्मा परमात्मा में भेद है या अभेद इनका आपस में अनादि सम्बन्ध है या सृष्टि बनने के बाद बना, आत्मायें नई पैदा होती हैं या अनादि से अनन्त काल तक वही रहती है,

(७) सातवां यह कि अनादि पदार्थ कितने हैं। केवल परमात्मा ही अनादि है या जीव और प्रकृति भी।

(८) आठवां यह कि मुक्ति किस तरह हो सकती है। कर्म से या शफात और सिफारिश से जप पाठ से या ज्ञान कर्म उपासना या केवल अन्धी श्रद्धा से ?

यह आठ सिद्धान्त हैं, जिन के कारण मतों में अनेकता है और झगड़े। अब देखना यह है कि वह कौन सा सत्य सिद्धान्त है। जिससे इन आठों का निर्णय हो सकता है।

उपनिषद् का एक वाक्य है जो ऋग्वेद के एक मन्त्र की टीका है

एको वशी सर्व भूतान्तरात्मा, एकं रूपं बहुधा
यः करोति, तमात्मस्थं ये अनुपश्यन्ति धीराः,
तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम ॥ (कठोप०)

इस का सार गुरू ग्रन्थ के मंगलाचरण में जो सिख मत का मूल मन्त्र माना जाता है, इस प्रकार है :—

१ ओंकार सतिनाम कर्ता पुरुख, निर्भौ, निरवैर
अकाल मूरति अजूनी सैंभँग गुरु प्रसादि ॥

अब पहला प्रश्न यह है कि ईश्वर है या नहीं ?

दूसरा यह कि एक है या अनेक ? इसका उत्तर दिया कि (एको) या (एक ओंकार) इस में नही है, का उत्तर है, कहने में, और संख्या का उत्तर एक कहने में आ गिया, अर्थात वह है, एक है और सदा से है अब प्रश्न हुआ कि वह एक क्यों और कहां रहता है ? तो उत्तर मिला कि (वशी) या (सतनाम) वह सर्व व्यापक, जिसमें घटना, बढ़ना नहीं, क्योंकि जहां परिवर्तन होगा वहां दो या अनेक होंगे और वहां एक दूसरे के मध्य में अन्तर या फासला भी होगा। जहां अन्तर होगा वहां सीमा होगी। इस लिये जो परमात्मा असीम, अपरिणामी और सर्व व्यापक है वह एक ही है। जब सर्वव्यापक है तो—

तीसरे प्रश्न का, कि, वह कहां है ? तो उत्तर मिला — (सर्व भूतान्तरात्मा) या (कर्ता पुरख) अर्थात सर्व पदार्थों के अन्दर विद्यमान है। पुरुष का अर्थ करते हुए प्रो० गा ह

ने लिखा कि " वह एक ओंकार जो सारे जगत में व्यापक है वह आत्मा जो सारी सृष्टि में रम रहा है। पुरुष शब्द मनुष्य और परमात्मा के लिए भी आया है" ।

सब जगह कहने से इस प्रश्न का उत्तर भी मिल गया कि ईश्वर सबके कर्मों को साक्षी होकर देखता है और स्वयं ही फल देता है। गुरु वाणी में (निर भौ निर वैर) लिख कर बतलाया कि जब उसको किसी का डर नहीं और न किसी से शत्रुता है तो वह निर्पक्ष होकर न्याय करता है और जीवों के कर्मों का यथा योग्य फल देता है। बहुत से सज्जन यह कह देगें कि हम किसी गुरु अवतार या पैगम्बर की ओट का सिद्धान्त क्यों न मानलें परन्तु याद रहे कि गुरू अवतार या पैगम्बरों आदि का मानना ससीम के रोग का इलाज है, चूंकि ईश्वर में यह रोग नहीं, इस लिये उस को किसी सहायक की अवश्यकता नहीं, घट घट वासी होने के कारण किसी से पूछने की जरूरत नहीं। मुनकर नकीर या चित्रगुप्त से लोगों के कर्म लिखाना या धर्म राज से न्याय करवाना भूल और अल्पज्ञता के रोग का इलाज है, परमात्मा सर्वज्ञ है अतः उसके न्याय नियम में लिखने वालों या सहायकों का कोई काम नहीं। सर्वव्यापक होने से कर्म फल देने के लिए अलग स्वर्ग नरक रखने की जरूरत नहीं।

पांचवां सिद्धान्त यह कि परमात्मा जगत को किस पदार्थ से बनाता है, तो बताया कि (एकं रूपम बहुधा या करोति) एक प्रकृति से नाना प्रकार की सृष्टि उत्पन्न करता है। परन्तु कई सिख सज्जन मुसलमानों का अनुकरण करते हुए जीव और प्रकृति को अनादि नहीं मानते, ज्ञानी प्रताप सिंह जी ने लिखा कि "गुरु जी को मत है कि एक परमात्मा ही अनादि है" ज्ञानी शेर सिंह का

कथन है कि "जो चाहे सो करे" अर्थात उस ने बिना किसी उपादान कारण के सन्सार को रचा है। जीव और वाहिगुरु में यही भेद है कि जीव उपादानके बिना नई रचना नहीं कर सकता, पर वाहिगुरु कर सकता है परन्तु इन ज्ञानी मित्रों को पता होना चाहिये कि गुरु नानक देव जी तो तीन पदार्थ अनादि मानते हैं जिसका विचार आगे चलकर होगा अब उपरोक्त शब्द में जो "गुरुप्रसाद,, है। गुरु का अर्थ सिख विद्वानों ने ईश्वर, बड़ा, असीम, भारी, अगुआ, लीडर, मन, ज्ञान, आचार्य, गुरु, वायु और रूहानी गुरु किया है। सोढी तेजा सिंह ने "गुरुप्रसाद,, का अर्थ "बड़ा कृपा स्वरूप" किया है। अब हम इन सज्जनों से पूछना चाहते हैं कि जब सृष्टि नहीं बनी थी और परमत्मा के सिवा कोई दूसरा था ही नहीं, तो वह किस से बड़ा और किस का कृपा स्वरूप था ? यदि वह सृष्टि उत्पति के बाद कृपा स्वरूप बना तो ईश्वर "आदि सच और जुगादि सच" न रहा और यदि अनादि काल से कृपा स्वरूप है तो जिन पर कृपा करता है वह अनादि काल से उस के संग मानने पड़ेंगे। गुरु तेग बहादुर जी ने साफ लिखा है। कि:—

पांच तत को तन रचियो, जानो चतुर सुजान।
जह ते उपजियो नानका, लीन ताहि मै मान ॥११॥

(श्लोक म० ६)

अर्थात:–हे चतुर बुद्धिमानो ! परमात्मा ने पृथिवी, जल, वायु, अग्नि, आकाश इन पांच तत्वों से सृष्टि के सारे तन रचे हैं और मृत्यु या प्रलय में यह अपने उपादान कारण तत्वों में ही मिल जाते है। फिर अभाव से भाव या नेस्ती से हस्ती मानना तो

सर्वथा अज्ञान है। गुरुवाणी का वाक्य है कि "हुकमी होवन आकार" अर्थात ईश्वर आज्ञा से आकार हुए तो ईश्वर ने वह आज्ञा किस को दी थी, जब कि कोई दूसरा था ही नहीं।

छटा सिद्धान्त यह है कि जीव और ब्रह्म एक हैं या अलग अलग, तो उतर दिया (तमात्मस्थं) "उस आत्मा में रहिने वाले को" अर्थात आत्मा व्याप्य अलग पदार्थ है और परमात्मा जो आत्मा में व्यापक है वह अलग सत्ता है।

सातवां सिद्धान्त यह था कि अनादि पदार्थ कितने हैं तो उत्तर मिला (पश्यन्ति धीरा) "उस के अन्दर देखते हैं" अर्थात देखने वाला जीव और देखने की वस्तु प्रकृति और उस के अन्दर देखने योग्य परमात्मा यह तीन पदार्थ अनादि हैं।

आठवां प्रश्न यह था कि मुक्ति किस प्रकार होती है तो कहा-जो ईश्वर को एक सर्वव्यापक, सब के अन्दर मानते हैं और उसे जीवों के कर्मों का फल देने वाला, प्रकृति से जगत को पैदा करने वाला और जीव ब्रह्म का भेद और तीन पदार्थ अनादि मानते है उन ही की मुक्ति हो सकती है। गुरु अमर दास जी ने कहा है कि:—

माटी एक सगल संसारा. बहु विधि भांडे घड़ै कुम्हारा ॥३॥
कहत नानक एह जीओ करम बन्ध होई॥
बिन सत्गुरु भेटे मुक्ति न होई ॥५॥

(भैरों म० ३)

अर्थात—एक ही प्रकृति रूपी मट्टी से परमात्मा रूपी कुम्हार सकल संसार को रचकर इस में नाना प्रकार के भांडे या शरीरों की रचना करता है। गुरु अमर दास जी कहते हैं कि,

जीव इस शरीर में कर्मानुसार बन्धन में आता है परन्तु सत्य ज्ञान के बिना या गुरु से ज्ञान प्राप्त किये या आदि गुरु परमात्मा को साक्षातकार किये बिना मुक्ति नहीं हो सकती ।

इस से सिद्ध है कि वेद मतानुसार दसों सिख गुरु भी, ईश्वर, जीव, प्रकृति तीन अनादि पदार्थ मानते थे ।

सतगुरू

प्रश्न— मनुष्य को कोई गुरु धारण करना चाहिए या नही ?

उत्तर— गुरू तो मनुष्य मात्र को धारण करना चाहिये क्योंकि मनुष्य अपने आप तो कुछ भी सीख नहीं सकता। कहा भी है।

"गुरू बिन ज्ञान न होवई ॥" (सोरठ म० ३)

प्रश्न— क्या गुरू शिष्य (सिख) का क्रम प्राचीन काल से चला आ रहा है ?

उत्तर— हां ! शतपथ ब्राह्मण का वचन है कि:—

मातृ मान, पितृ मानाचार्य वान् पुरुषो वेद ॥

अर्थात-जब तीन उत्तम गुरू-अर्थात माता, पिता और आचार्य होवें तभी मनुष्य ज्ञानवान होता है, परन्तु आज कल तो केवल गुरू मन्त्र देने वाले, कान फूंके, झूठे नाम मात्र के गुरू बन बैठते हैं। उस समय तो सच्ची शिक्षा देने वाले, सत्य ज्ञान दाता उपदेशक ही गुरू हुआ करते थे। याद रखना चाहिए कि जो पुरुष जीवात्मा को विभु और निर्लेप मानता हो अर्थात पांच इन्द्रे को ही कर्मो का करने वाला और दुख सुख का भोगने

वाला समझता हो और पाप-पुण्य का करता आत्मा को न मानता हो, जो अपने आप को ब्रह्म बतलाता हो या जो जल, स्थान, नदी, तालाबों को तीर्थ मान, इन में स्नान करने से मुक्ति, मढ़ियों और कबरों की पूजा, भूतों प्रेतों से दुःख सुख का मिलना, पत्थर, पीतल आदि की मूर्तियों को ठाकुर, पुस्तक पूजा, पीर प्रस्ती, गुरूडम, अनीश्वर पूजा पर विश्वास रखने वाला हो जो ईश्वर की जगह अपनी पूजा और भक्ति कराने वाला हो या गण्डे, तावीज और यन्त्र मन्त्र से दुखों के नाश और सुखों की प्राप्ति का विश्वासी हो तो ऐसे अज्ञानी, ढोंगी पुरुषों को गुरू धारण करना महा पाप, भूल और दुखों का कारण है।

प्रश्न— ऐसे गुरुओं का उपदेश और संग सिख को पापी कैसे बना देता है?

उत्तर— जो गुरू अपने आप को ब्रह्म मान अच्छे बुरे कर्मों का करता ही नहीं मानता वह अपने सिखों को पाप रहित होने का उपदेश कैसे दे सकता है? इसी प्रकार जो गुरू ईश्वर को छोड़ जड़ पूजा, पुस्तक पूजा या गुरू पूजा आदि पर श्रद्धा रखता और रखवाता है, वह अपने सिखों को ईश्वर विश्वास या भक्ति का उपदेश कैसे दे सकता है?

प्रश्न— तो फिर गुरू किस को धारण करें?

उत्तर— गुरू तो पूर्ण ज्ञानी, सत्य वक्ता, वेद भक्त, आप्त विद्वान ही बनने के योग्य है, दूसरा नहीं। गुरू नानक जी ने इस पर बड़े उत्तम ढंग से प्रकाश डाला हैं जैसे कि आसा की वार में लिखा है कि:—

नदरि करे जे आपनी, तां नदरी सत्गुरु पाइआ ॥
एह जीऊ बहुते जन्म भरमिया, तां सतगुर सब्द सुनाइआ ॥
सतगुरू जे वड दाता को नहीं, सभ सुनो लोक सबाइआ ॥
सतगुर मिलिये सच पाइआ, जिनी विचहों आप गंवाइआ ॥
जिनि सचा सच बुझाइआ ॥४॥ (आसा वार म० १)

अर्थात— जब प्रभु अपनी दया करता है तो सतगुरु प्राप्त होता है, यह जीव अनेक जन्म फिरा तो इस को सतगुरु ने सत्य ज्ञान (शब्द) सुनाया, सतगुरु के तुल्य बड़ा दाता कोई नहीं, इस को सारा जगत सुन ले, सतगुरु के मिलाप से सत्य की प्राप्ति हुई, जिन्हों ने अपना अभिमान दूर कर सत्य मार्ग बतलाया।

हम अपने आप ज्ञानी नहीं बन सकते, इस के लिये ज्ञान दाता की आवश्यकता है। जब सृष्टि बनी थी तो उस समय सारे मनुष्य एक ही अवस्था मे पैदा हुए थे, कोई किसी से न ज्ञान प्राप्त कर सकता था और न ही दे सकता था, इस अवस्था में परम गुरु, अनादि गुरु परमात्मा ने चार ऋषियों द्वारा आदि आत्माओं को ज्ञान दिया था, इसी सत्य ज्ञान को गुरु वाणी में नाद और वेद या शब्द और ज्ञान कहा है और ईश्वर को "गुरू गुर इको" अर्थात गुरुओं का भी एक ही गुरु कहा है। यदि परमात्मा मनुष्यों को उत्पन्न कर ज्ञान न देता—

तो यह संसार हमारे लिये व्यर्थ और बेकार था। परमात्मा को आदि अनादि और सतगुरु मान लेने से परमात्मा से होते आये गुरुओं की शान में कोई कमी नहीं आती क्योंकि जगत भर के गुरुओं ने भी परमात्मा को अपना एक मात्र गुरु माना है। सारे सिख विद्वानों ने गुरु नानक जी का गुरु भी अकाल पुरुष

ही बताया है। वास्तव में सत्य ज्ञान तो सब को परमात्मा से मिला, कोई सचाई किसी मनुष्य या देहधारी गुरु ने नहीं बनाई। सारे देहधारी मानव भी सतगुरु बनने योग्य नहीं होते। जनता के जीवन को लेकर खेलना कोई साधारण बात नहीं। इसी लिये वेद भगवान ने वेद ज्ञानी, ब्रह्म के जानने वाले गुरु के पास जा कर उन से ज्ञान प्राप्त करने की आज्ञा दी है। जो आप अन्धा है, वह दूसरे अन्धे को कैसे मार्ग दिखला सकता है।

गुरु नानक जी ने कहा, कि:—

नानक अंधा होय के दसे राहै, सभस मुहाय साथै ॥

(माझ की वार म० १)

अर्थात—जो अंधा हो कर दूसरों को मार्ग दिखाये, वह तो अपने पीछे आने वालों को गढ़े में गिरायेगा। फिर कहा:—

अंधे गुरू ते भरमु न जाई ॥ (गौड़ी म० ३)

गुरु जिना का अंधुला, सिख भी अंधे कर्म करेन ॥

(रामकली म० ३)

अर्थात्—जिन के गुरु अंधे अर्थात अज्ञानी होते हैं उन के सिख भी अज्ञान भरी बातें करते हैं। आज संसार में यही कुछ हो रहा है। अज्ञानी सिखी के चिन्ह लगा कर गुरु सिख बन जाते हैं, परन्तु जब उन से गुरु ज्ञान पूछा जाता है तो चुप लगा जाते हैं।

ईश्वर प्राप्ति की आशा में, अज्ञानी, लोभी और दुराचारी लोगों को गुरु धारण करना बड़ी अज्ञानता और पाप कर्म है। जिन के मन, धन के लोभ और मान के मोह में फंसे हुए हैं वह दूसरोंको मार्ग क्या बतायेंगे। गुरु गोबिन्दसिंह जीने जब परमात्मा

के स्थान पर गुरुडम और मनुष्य पूजा होते देखी तो बड़ी डांट बतलाई और कहा कि:—

जो हम को परमेसर उचरि हैं॥ ते सभ नरक कुंड मे परि हैं॥
मैं हो परम पुरख का दासा, देखन आयो जगत तमासा॥

(बचित्र नाटक अध्याय ६ श० ३२-३३)

अर्थात्— जो मूर्ख हम को परमात्मा के स्थान में उपास्य मानेंगे या हमारे नाम का जाप करेंगे, वह नरक कुंड में पड़ेंगे। मैं तो परम पुरुष परमात्मा का दास हूं, उस के न्याय नियमानुसार जन्म ले, जगत तमाशा देखने आया हूं।

दशन गुरु की इतनी साफ डांट या आज्ञा के बाद भी हम गुरु सिखों को उसी कुमार्ग पर जाता हुआ देख रहे हैं जो गुरु बचनानुसार नरक कुंड के अधिकारी बन रहे हैं।

एक बात में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है कि स्त्रीयों के लिए दो ही गुरु हैं, जिन की पूजा का उन को आदेश और अधिकार है, एक पति देव और दूसरा जगत पति परमेश्वर, इन दो को छोड़ किसी तीसरे को गुरु धारण करना स्त्री के लिये महा पाप है। वह किसी ज्ञानवान स्त्री से तो ज्ञान या शिक्षा प्राप्त कर सकती है या किसी सत संग या समाज में जा किसी विद्वान महात्मा का उपदेश तो सुन सकती है, परन्तु एकान्त में किसी भी पर पुरुष के पास आना जाना या अकेले उपदेश या गुरु मन्त्र लेना बड़ा हानि कारक पाप कर्म है। क्योंकि शास्त्र ने तो अपने पिता के पास पुत्री का एकान्त वास करना भी निषिद्ध कहा है।

प्रश्न— गुरु जो ज्ञान दाता है, इस लिए उसको ईश्वर समान मानना और उस की मूर्ति का भजन ध्यान या उसकी रचित पुस्तक, वाणी या ग्रन्थ को पूजना, शीश झुकाना ठीक ही तो है।

उत्तर—जो पदार्थ जैसा हो, उस को वैसा ही जानना और मानना ज्ञान है, इस से उलट अज्ञान। इस लिये गुरू परमेश्वर नहीं, हां ईश्वर को मिलाने वाला, पथ प्रदर्शक, नेता सत्कार योग्य होता है, नेता आदि का यह भी कोई छोटा पद नहीं, गुरू या नेता वही सत्कार योग्य है जो ईश्वर आज्ञा या वेद ज्ञान के विरुद्ध एक पग भी न चले। गुरू मूर्ति का ध्यान और भजन भी अज्ञान्ता है। क्योंकि वह हमें ज्ञान नहीं दे सकती। गुरु वाणी की पुस्तक का धर्मोपदेश का सुनना तो ठीक, परन्तु इस को शीश झुकाना, प्रसाद चढ़ाना तो मूर्ति पूजा है। पुस्तक तो जड़ है जिस को मनुष्यों ने छापाखाने या प्रेस में छापा और उसकी जिल्द बांधी है।

प्रश्न—प्रि० जोध सिंह जी, सिख गुरू को नरंकार का रूप समझें। गुरू वाणी हीं रब्बी कलाम है, गुरु अंतरात्मे नरंकार से अभेद है, इस लिये गुरूपदेश हीं नरंकारी ज्ञान है?

उत्तर—गुरु को नरंकार का रूप मानने से दो नरंकार हो जावेंगे, इसी मानता से तो संसार में अज्ञान फैला, मुसलमानों ने खुदा के साथ मुहम्मद को, इसाईयों ने ईसा को, मूसाईयों ने मूसा को, पौराणकों ने चौबीस अवतारों को, कबीर, दादु पन्थियों ने कबीर, दादू को, गुरु सिखों ने दश गुरूओं को ईश्वर का शरीक मान लिया जिस से संसार में अनेक मत

फैल गए, जो मनुष्य मात्र में फूट का कारण बन रहे है। पक्षपात को छोड़ कर एक ईश्वर भक्ति ही मेल और सुखों का कारण हो सकती है।

कर्म फल तथा पुनर्जन्म

प्रश्नः—जीव का जन्म एक है वा अनेक ? जो अनेक हों तो पूर्व जन्म और मृत्यु की बातों का स्मरण क्यों नहीं ?

उत्तरः—जन्म अनेक हैं, जीव अल्पज्ञ है, इस लिये स्मरण नहीं रहता, और जिस मन से याद करता है वह भी एक समय में दो का ज्ञान नहीं कर सकता। पूर्व जन्म की बात तो दूर रही, इसी देह में जब जीव गर्भ में था, शरीर बना, जन्म हुआ, पांचवे वर्ष के पूर्व तक जो २ बातें हुई, उन का स्मरण क्यों नहीं कर सकता ? जाग्रत या स्वप्न में जो व्यवहार करता है उनको गाढ़ निद्रा में स्मरण क्यों नहीं कर सकता ? जब कोई किसी से पूछे कि आज से दस दिन पहले प्रातः से ले दस बजे तक तूने क्या २ काम किया था, क्या कुछ खाया पिया था, किस २ से मिला, क्या बातें कीं, रसोइ में क्या पक्का था, किस २ से लेन देन किया, कहां बैठा था, मुंह किस ओर था ? तो कोई उत्तर न मिल सकेगा, तो पिछले जन्म की बातों की याद पर शंका करना लड़कपन की बातें है। फिर यह भी ईश्वर की दया समझो। क्योंकि जब पिछले जन्म के दुःख सुख की बात याद आती तो कितना दुखी होता, जीवन कितना कष्ट से भर जाता, रोता और सर फोड़ कर मर जाता।

प्रश्नः— जब जीव को पिछले जन्म की बातों का ज्ञान ही नहीं तो यह न जानने से कि मुझे कौन २ से कर्मों का दण्ड मिल

रहा है तो उस का सुधार कैसे होगा ? यदि उस को कर्मों के फल का पता लग जाता, तो आगे को ऐसे काम न करता ?

उत्तर:— ज्ञान प्रत्यक्षादि प्रमाणों से आठ प्रकार का है जिन में अनुमान भी ज्ञान का साधन है, तो जब मनुष्य जन्म से लेकर समय २ पर राजय, धन, विद्या, कंगाली, निर्बुद्धि, मूर्खता आदि सुख दुःख संसार में देखता है तो पूर्व जन्म का ज्ञान क्यों नहीं करता ? जैसे एक अवैद्य और एक वैद्य को रोग हो तो उस का कारण वैद्य जान लेता है और अविद्वान नहीं जान सकता। हां इतना तो अविद्वान भी जान जाता है कि मुझ से कोई भूल या कुपथ्य हो गया है। वैसे ही जगत में तरह तरह के सुख दुख हानि लाभ को देख पूर्व जन्म का अनुमान क्यों नहीं जान लेते यदि पूर्व जन्म को न जानें तो ईश्वर पक्षपाती सिद्ध होगा क्योंकि बिना पाप के दुःख और बिना पुण्य के राज्य सुख क्यों दे दिया ? पूर्व जन्म के पाप पुण्य अनुसार सुख दुःख के देने से ईश्वर न्यायकारी सिद्ध हो रहा है ।

प्रश्नः— एक जन्म होने से परमात्मा न्यायकारी हो सकता है, जैसा कि एक पूर्ण अधिकारी राजा जो भी करे वही न्याय होता है ?

उत्तर:— परमात्मा सच्चा न्यायकारी है, वह अन्याय, अत्याचार या ऊटपटांग न्याय विरुद्ध काम नहीं करता, यदि करे तो कोई भी उस को ईश्वर न माने। जैसे एक बुद्धिमान माली बाग में रखने योग्य पोधों की सेवा करता और बढ़ाता, लाभकारी फलदार वृक्षों की रक्षा कर उन को हानि पहुंचाने वाले घास फूस को उखाड़ कर बाहर फैंक देता है और बाग की शोभा को

बढ़ाता है। इसी प्रकार न्यायकारी परमात्मा पापियों को दण्ड देकर और धर्मात्माओं को सुख देकर संसार का पूज्य, शुद्ध और पवित्र न्यायकारी कहलाता हैं। ईश्वर निर्वैर और सत्य स्वरूप है अतः उस का न्याय भी ऐसा ही है।

प्रश्न:—परमात्मा ने पहले ही जो कुछ किसी प्राणी को देना विचारा है· वह वैसा और उतना ही देता है।

उत्तर—इस से पहले बतलाया जा चुका है कि परमात्मा का विचार जीवों के कर्मानसार होता है बिना विचारे अटकल पच्चु नहीं, यदि वह अन्यथा करे तो अपराधी और अन्यायकारी होवे।

प्रश्न—मनुष्य और दूसरे पशवादि के शरीर में जीव एक सा है, या भिन्न २?

उत्तर—सब में एक सा है, परन्तु पाप पुण्य के योग से मलिन, और पवित्र होता है। मनुष्य का जीवात्मा पशुओं के शरीर में और पशुओं का मनुष्य शरीर में आता जाता है। क्योंकि जब पाप बढ़ जाते है और पुण्य थोड़े होते हैं, तो मनुष्य का जीव पशवादि के शरीर में और जब धर्म अधिक और पाप कम होता है, तब देव अर्थात विद्वानों का शरीर मिलता है, और पाप पुण्य बराबर होने पर मनुष्य शरीर होता है इस में भी पुण्य पाप के उत्तम मध्यम और निकृष्ट होने से मनुष्यादि में भी उत्तम, मध्यम और निकृष्ट होता है-इस सिद्धान्त के पक्ष में गुरू वाणीं के अनेक प्रमाण हैं जिन में से कुछ निम्न हैं:—

हुकमी उत्तम नीच, हुकमि लिखि दुख सुख पाईये [जपजी]

अर्थात्—परमात्मा के न्यायानुसार प्राणी उत्तम और नीच योनियों मे आते जाते और उसी के हुकम या न्याय से सुख दूखः

पाते हैं।

नानक औगुण जे तड़े, तेते गलीं जंजीर] [सोरठ म० १]:

अर्थात—नानक जी कहते हैं कि प्राणी जितने अवगुण या बुरे कर्म करता है; उस के गले में उतने ही जंजीर पड़ते है अर्थात कर्मानुसार फल मिलता है।

जैसा करें सु तैसा पावै॥ आपि बीजि आपे ही खावै॥

(धनासरी म० १.)

अर्थात—जैसा कोई करता है वैसा पा लेता है, अपनी कमाई आप ही खाता है।

मंदा चंगा आपना, आपे ही कीता पावना॥ (आसा म० १)

अर्थात—अपना किया भला बुरा कर्म, अपने ही आगे आयेगा, अपना किया आप ही भुगतना पड़ेगा।

लेखु न मिटई पूर्ब कमाइआ' क्या जाना क्या होसी॥

(धनासरी म० १)

अरर्थात—पूर्व किये कर्मों का फल कोई मिटा नहीं सकता, मनुष्य नहीं जान सकता कि उस के साथ क्या होगा क्योंकि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है परन्तु कर्म फल प्रभु आधनि है।

कई जनम भए कीट पतंगा॥ कई जनम गज मीनबुरंगा॥
कई जनम पंखी सरप होयो॥ कई जनम हैवर बृख जोयो॥१॥
मिल जगदीस मिलन की बरीया चिरंकाल एह देह संजरीया॥१॥

(गौड़ी गुआरेरी म० ५)

अर्थात—यह प्राणी कई जन्म कीड़े पतंगों के शरीर में रहा कई जन्म हाथी, मछली घोड़े आदि पशु योनि में रहा, कई जन्म इस को पक्षी सांप का शरीर मिला, कई जन्म स्थावर योनियों में वृक्षादि बना रहा, अब मनुष्य जन्म में इसके लिए प्रभु प्राप्ति का अवसर है, बड़ी देर के बाद इसको यह शरीर प्राप्त हुआ है।

परन्तु इस के विरुद्ध जो भाई यह समझते हैं कि गुरूवाणी के पाठ मात्र से या गुरू ग्रन्थ के आगे अरदास कर लेने या मनत मानने से, कड़ाह प्रसाद भेंट करने या रुमाल चढ़ाने से हमारे दुःख दूर हो जायेंगे या कर्म फल में कमी बेशी हो जायेगी या जो यह विश्वास रखते हैं कि एक सौ एक अखन्ड पाठ करा देने से प्रभु के न्याय नियम में हेर फेर हो जोयेगा वह वेद के सत्य सिद्धान्त के विरुद्ध चल कर अज्ञान अन्धकार के गढ़े में जा गिरेंगे। जब कि गुरू वाणी भी साफ कह रही है कि किये कर्मों का फल अवश्य भुगतना पड़ेगा, प्रभु के न्याय नियमको कोई बदल नहीं सकता, परन्तु अज्ञानी लोग उल्टे प्रमाण पेश करते है कि:—

(१) अजामल पापी नारायण कहते ही तर गया।
(२) वेश्या तोते को राम नाम पढ़ाती तर गई।
(३) किसी कोढ़ी का, दुःख भंजनी साहब के तालाब में नहाते ही कोढ़ दूर हो गया।
(४) राम दास सरोवर में स्नान करने से कौवा हंस बन गया।

(५) राम दास सरोवरि नाते ॥ सभि उतरे पाप कमाते ॥
(सोरठ म० ५)

अमृतसर, तरन तारन के तालाब में पाप छूट जाते हैं।

ऐसे लोग बड़ी भूल में है। इन असत्य बातों को मान कर मूर्ख अधिक पाप करने लग जाते हैं, जिस से संसार में अनाचार फैलता है।

करामात

आज संसार में जितना भी दुःख दिखाई देता है, इसका कारण केवल यह है कि लोगों ने मन और बुद्धिसे काम लेना छोड़ दिया है। "बाबा वाक्यम् प्रमाणम्" कह कर मजहब में बुद्धि का दखल बन्द कर दिया है, यह सत्य है कि माने बिना कोई सिद्धान्त स्थिर नहीं रह सकता, परन्तु मानने से पहले उसका जानना और सच्चा होना आवश्यक है, जहां जानने का स्थान मानने को दे दिया जाता है और अंध विश्वास से काम लिया जाता है वहां प्रकाश की जगह अंधकार छा जाता है। इतिहास जहां हमें बतलाता है कि समय २ पर सुधारक आकर भूल सुधार करते रहे वहां यह भी पता चलता है कि कुछ लोग ऐसे उठे, जिन्हों ने इन सुधारकों के यत्न पर पानी फेर दिया, यह लोग थेः-मठधारी, स्वार्थी मतों के संचालक और इनके अज्ञानी चेले, जिन्हों ने अपना उल्लू सीधा करने के लिये देश और जाति को दुःखों के सागर में डबोया।

मुसलमान, जो खुदा और रसूल को एक साथ मानना बलकि रसूल को खुदा से भी बढ़ कर मानना, अपना ईमान समझता है, कहता हुआ सुनाई देता है किः—

बन्दे ही तेरे नहीं हैं मदाह, अल्लाह भी मदाह खां है तेरा॥

और फिर कहाः—

मुहम्मद न होते खुदाई न होती,
खुदा ने यह दुनियां बनाई न होती ॥

गुरू बाणी में जहां यह कहा है कि:—

करण कारण प्रभु एकु है, दूसर नाहीं कोइ ॥
नानक तिस बलिहारणै, जलि थलि महीयल सोइ ॥१॥
(गौड़ी सुखमनी श्लोक म० ५)

अर्थात:— एक ही परमात्मा है जो निज शक्ति से संसार को बनाता, पालन करता और संघार करता है, वही न्यायकारी कर्मफल दाता है उस जैसा कोई नहीं, नानक जी कहते हैं कि मैं उसपर बलिहार जाऊं जो सारे जगत में एक रस व्यापक है ।

वहां गुरू सिख यह भी कहते सुनाई देते हैं कि:—

मेरी बांधी भगतु छुडावै, बांधै भगतु न छूटै मोहि ॥
(सारंग नाम देव)

अर्थात:— (परमात्मा के मुंह से कहलवाया) मैं जिसको बांधूं भगत उसको छुड़ा सकता है, परन्तु जिसको भगत बांधे उसको मैं भी नहीं छुड़ा सकता । फिर कहा:—

कबीरा सो नर अंध है जो गुरू को कहते और
प्रभु रूठे गुरू ठौर है । गुरू रूठे नहीं ठौर ॥

अर्थात— कबीर ने कहा कि वह लोग अज्ञानी हैं जो गुरू को ईश्वर से कम कहते है । यदि प्रभु रूठ जाये तो गुरू सहायता करने को मौजूद है और यदि गुरू रूठ जाये तो फिर कोई ठौर ठिकाना नहीं ।

प्रि० जोध सिंह जी एम० ए० गुरूमत निर्णय में लिखते हैं कि " सिख इतिहास में करामातों का वर्णन है, परन्तु गुरुओं ने यह नहीं कहा कि हमारी शिक्षा इस लिये मानों कि हम करामातें दिखा सकते हैं, नहीं, अपना दुःख टालने केलिये उन्होंने करामात से काम लिया।

स० जोध सिंह जी का लेख करामात के खन्डन और मन्डन दोनों को सिद्ध कर रहा है और सिख साहित्य में भी दोनों पक्ष पाये जाते हैं। जैसा कि:—

नानक सा करमाति साहिब तुठै जो मिलै ॥१॥

(आसा म० २)

अर्थात:— प्रभु की कृपा से जो मिले यही करामात है:—

बाझों सचे नाम दे; होर करामात असां ते नाहीं ॥

अर्थात:— एक ईश्वर भक्ति के सिवा और कोई करामात हमारे पास नहीं है। अब इस विचार के विरुद्ध प्रमाण देखिये सिख इतिहास जो कई सिख विद्वानों ने मिलकर लिखा है और जिसको भूलें निकाल कर बड़ी खोज से लिखा गया है, में लिखा मिलता है कि:—

(१) गुरू अंगद देव जी के पांव पर फोड़ा था, इसका रक्त आपके पवित्र वस्त्रों पर लग गया, गुरू जी ने अमर दास (तीसरे गुरू) को कहा कि इसे धुला लाओ, धोबी ने कहा यह दाग पक्का है, उत्तर न सकेगा, तब अमर दास ने अपनी जीभ से चूस लिया, दाग उत्तर गया। अमर दास जी ने गुरू जी से कहा कि महाराज! जिस प्रकार इस वस्त्र से दाग उत्तर गया है, उसी प्रकार इस रक्त

के चाटने से मेरे मन की मलीनता भी मिट गई है।

(२) गुरू अंगद जी को पांव का यह फोड़ा बहुत दुःख दे रहा था, एक रात उस में से पीप बह रही थी, गुरू जी अमर दास को कहने लगे कि पीड़ा के कारण नींद नहीं आती। अमर दास जी उठे, अपना मूंह फोडे को लगाया, उस को चूस लिया, गुरु जी को तुरन्त आराम आ गया। गुरु जी प्रसन्न हो कहने लगे। "कुछ मांग।"

(३) हरिपुर का राजा गुरु अमर दास जी के दर्शनों को आया, पहले राजा जी ने दर्शन किये फिर प्रधान मन्त्री ने। राजा की राणी भी साथ जो नई विवाहिता थी, उस ने अपना घुंघट न उतारा! गुरु जी ने सहज स्वभाव से कहा, ऐ पगली! यदि तू गुरु को देख कर प्रसन्न नहीं होती, तो यहां क्यों आई थी? इतना कहना था कि वह पगली हो गई। उसने अपने, कपड़े उतार दिये और जंगल में भाग गई।

(४) एक सुनार और उसकी स्त्री जो बहुत बूढ़े हो चुके थे उन के हां सन्तान न थी, कई उपाय किये, कई जादू टूने और गन्डे तावीज लिये, परन्तु कुछ न बना। गुरु अमर दास जी का जब आगमन हुआ, तो दोनों भेंट लेकर चरणों में आये, गुरु जी ने पूछा, क्या चाहते हो तो उन्होंने सन्तान के लिये प्रार्थना की। गुरु जी ने वर दे दिया। उनकी सन्तान हो गई। वृद्ध अवस्था की सन्तान होने के कारण वंश का नाम "माई पौत्रे,, पड़ गया।

प्यारे पाठक! ऐसी करामातों से सिख इतिहास भरा पड़ा है, यदि सब को लिखा जाय, तो बड़ा भारी पोथा बन जाय।

वर्ण आश्रम धर्म

वर्ण — जो गुण कर्मों के योग से ग्रहण किया जाता है, उस को वर्ण कहते हैं इस के चार भेद हैं। ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र।

आश्रम— जिन में अत्यन्त परिश्रम करके उत्तम गुणों का ग्रहण और श्रेष्ठ काम किये जायें उन को आश्रम कहते हैं। इस के भी चार भेद हैं।

जो सद्विद्यादि शुभ गुणों का ग्रहण तथा जितेन्द्रियता से आत्मा और शरीर के बल को बढ़ाने के लिये हो, वह ब्रह्मचारी।

जो सन्तानोत्पति और विद्यादि सब व्यवहारों को सिद्ध करने के लिये हो, वह गृहाश्रम।

जो विचार के लिये हो, वह वानप्रस्थ।

जो सर्वोपकार करने के लिये हो, वह सन्यासाश्रम होता है, यह चार आश्रम कहलाते हैं।

वर्ण और आश्रम गुण कर्म और स्वभाव से माना जाता है, जन्म से नहीं।

भाई काहन सिंह जी नाभा वाले "गुरु मत प्रभाकर" पुस्तक में लिखते है कि सिख धर्म में जाति केवल कर्मानुसार है, जन्म से इसका कोई सम्बन्ध नहीं, विद्वान, ज्ञानी ब्राह्मण। शूरवीर शस्त्रधारी क्षत्री। व्योपारी और किसान वैश्य। टहल मजदूरी से उपजीवका करने वाला शूद्र है। जो सेवक विद्वान होकर उपदेश करता है तो वही ब्राह्मण है और शस्त्रधारी किसान क्षत्री पद से बुलाया जाता है। इसी पुस्तक के पृष्ठ ४०६ पर ब्रह्मचर्य, गृहस्थ

बान प्रस्थ और सन्यास चारों आश्रमों का समर्थन है।

पं० तारा सिंह जी ने गुरु गिरा अर्थ कोष में लिखा है कि मनुष्य-पन में सब सम हैं और गुण भेद से ब्राह्मणादि चार विभाग ईश्वर ने रचे हैं। शम दमादि कर्मों के अनुसार रचे हैं। जिस में सतोगुण मुख्य हो वह ब्राह्मण, जिस में रजोगुण मुख्य हों और सतोगुण गौण हो वह क्षत्री, जिस में रजोगुण मुख्य तमोगुण गौण वह वैश्य, जिस में तमोगुण मुख्य रजोगुण गौण वह शूद्र, यह चारों में गुणों का विभाग है।

गुरु ग्रन्थ में भी आया है कि :—

ब्राहमण खत्री सूद वैस चारि वर्ण चारि आस्रम है
जो हरि ध्यावै सो प्रधान।

(राग गौड म० ४)

अर्थात- ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र चार वर्ण आश्रम हैं इन में जो भी ईश्वर भक्ति करता है वही प्रधान नेता है।

खत्री ब्राह्मण सूद वैस सब एकै नामि तरानथ ॥

(मारू म० ५)

अर्थात- ब्राह्मण, क्षत्री, शूद्र, और वैश्य सब एक ईश्वर स्मरण से तर जाते हैं।

सो ब्राह्मण जो ब्रह्म बीचारै ॥
आपि तरै सगले कुल तारै ॥३॥

(धनासरी म० १)

अर्थात- ब्राह्मण वही है जो ब्रह्म (ईश्वर और वेद) का

विचार करता है, ऐसा ब्राह्मण जहां आप तर जाता है वहां सारे कुलों या दूसरे वर्णों को भी वेदोपदेश से तार देता है।

सो ब्राह्मण ब्रह्म जो बिन्दे हरि सेती रंग राता ॥

(श्री राग म० ३)

अर्थात–ब्राह्मण वही है जो ईश्वर भक्ति और वेद ज्ञान को प्राप्त करता है। जो प्रभु के रंग से रंगा हुआ है।

सो ब्रह्मण जो बिन्दै ब्रह्म ॥ जपु तपु संजमु कमावै कर्म ॥
सील सन्तोख का रखे धर्म ॥ बन्धन तोड़े होवै मुक्त ॥
सोई ब्रह्मण पूजन जुगत ॥ ६॥

(शलोक बारां ते वधीक म० १)

ब्राह्मण वही है जो ईश्वर वन्दन और वेद ज्ञ न उपारजन करता है, जप, तप संयम कर्म कमाता और शील, सन्तोष रूपी धर्म रखता है, जो ससार बन्धन को तोड़ मुक्त हो जाता है या पापों से छुटकारा पा लेता है वही ब्राह्मण पूजा और सत्कार के योग्य है।

कहु कबीर जो ब्रहम बीचारै। सो ब्राह्मण कहीयत है हमारै।४।

(गौड़ी कबीर)

हमारे मत में तो ब्राह्मण वही है जो वेद को पढ़ पढ़ा कर तदानुसार एक प्रभु की भक्ति करता है।

सन्ध्या या ब्रह्म यज्ञ

सन्ध्योपासन को ब्रह्म यज्ञ भी कहते हैं। मनुष्य मात्र का

कर्तव्य है कि दिन और रात्रि की सन्धि में अर्थात सूर्योदय और अस्त के समय दोकाल ईश्वर का अवश्य ध्यान करे।

प्रश्न—सन्ध्या दो काल की जगह त्रिकाल क्यों न करें ?

उत्तरः—वैसे तो परमात्मा को हर समय सम्मुख रखना चाहिये, क्योंकि गुरु नानक जी ने कहा है कि:—

परमेसर ते भुलियां व्यापन सभे रोग ॥

(माझ म० ५)

अर्थात- जब मनुष्य परमात्मा को सर्व व्यापक नहीं मानता, उस की सत्ता को भूल जाता है तो उसे काम क्रोधादि रोग लग जाते हैं। यह दो समय ऐसे हैं, जब कि मनुष्य को अवकाश होता है, यह शांत वेला भी है इस लिए प्रभु स्मरण में मन लगता है। इस प्रकार तो लिख भाई पांच समय नित्य नियम और मुससमान भाई पांच वक्त की नमाज़ कहेंगे, कोई चार या छे बार भी कह सकता है, जिस से अनेकता होगी, इस लिये प्राचीन ऋषियों ने दो काल ही सन्ध्या का विधान किया है। गुरु वाणी में भी सन्ध्या का विधान कई जगह हैं, जैसा कि:—

एहा सन्ध्या परवान है, जित हरि प्रभु मेरा चित आवै ॥
हरि स्यों प्रीति ऊपजै, माइया मोह जलावै ॥
गुर परसादी दुब्धा मरै मनुआ स्थिर सन्ध्या करे विचार
नानक सन्ध्या करै मन मुखी,
जीउ न टिकै मरि जमै होये खुवार ॥१॥

(बहागड़े की वार म० ३)

अर्थात- सन्ध्या तो वह स्वीकार है या सन्ध्या करने की

विधि तो यह है कि चित परमात्मा की भक्ति में लग जावे, प्रभु से प्रेम उत्पन्न हो, जो सन्ध्या माया मोह को जला दे, गुरु कृपा या सत्य ज्ञान की प्राप्ति से मेरे मन की दुब्धा मिट जाय, हम किसी और की भक्ति न करें, मन स्थिर होकर या एकाग्र चित्त होकर विचार पूर्वक सन्ध्या करे। केवल मात्र तोते की तरह रटते ही न रहें। अर्थ विचार से अपने मन को उस के अनुकूल बनायें। नानक जी कहते हैं कि मन मुख या प्रभु से बेमुख लोग सन्ध्या तो करते है। परन्तु उन का मन टिकता नहीं।

ज्ञानी शेर सिह जी के शब्दों में वाणी तोते की तरह गुरु वाणी का पाठ करती है। ऐसे मनुष्य जन्म मरण के चक्कर में पड़ कर दुःखी और खुवार हुआ करते हैं। उपरोक्त शब्दों में सन्ध्या ठीक विधि से करने का विधान है

देव यज्ञ या हवन

वैदिक धर्म में ब्रह्म यज्ञ अर्थात सन्ध्या ईश्वर उपासना और वेद के स्वाध्याप के पश्चात देव यज्ञ या हवन का विधान है। जिस से घृत, सुगन्धित पदार्थो और रोग दूर करने वाली ओषधियों को इकत्र कर इस सामग्री से अग्नि में होम किया जाता है। यह भी ब्रह्म यज्ञ (सन्ध्या) के साथ प्रातः और सायं दो काल करना चाहिए इस से संसार का उपकार है।

प्रश्न– हवन करने से संसार का क्या उपकार है ?

उत्तर–सब लोग जानते हैं कि दुर्गन्धि से वायु और जल का बिगाड़ होकर रोग फैल जाया करते हैं। जिन से प्राणी दुःखी होते हैं हवन से जल, वायु सुगन्धित होकर रोगों का नाश करते हैं और प्राणी सुखी होते हैं।

प्रश्न—यदि ऐसा है तो केसर, कस्तूरी, फूल आदि सुगन्धित पदार्थ घर में रखने से वायु, जल पवित्र होंगे और सुख आनन्द होगा ?

उत्तर—इस सुगन्ध में इतनी शक्ति नहीं जो घरों की अपवित्र वायु को निकाल कर उस की जगह शुद्ध वायु का प्रवेश करा सके यह अग्नि का ही सामर्थ्य है जो गन्दी वायु को छिन भिन्न कर बाहर निकाल पवित्र वायु का प्रवेश करा देती है ।

प्रश्न—ऐसा ही है तो वेद मन्त्रों को पढ़ कर हवन करने से क्या प्रयोजन सिद्ध होता है ?

उत्तर—इन मन्त्रों में वह व्याख्यान हैं कि जिन से हवन के लाभ ज्ञात हो जाते हैं और मन्त्रों के बार २ उच्चारण से याद हो जाते है जिस से वेदों का पढ़ना पढ़ाना और रक्षा भी होती है।

प्रश्न—क्या हवन न करने में पाप है ?

उत्तर—हां ! क्योंकि मनुष्यों के शरीर से जितनी दुर्गन्ध निकल कर जल वायु को बिगाड़ती है और उस से रोग उत्पन्न होते हैं और दुःखों का कारण बनते हैं, उतना ही पाप मनुष्यों को हवन न करने से होता है ।

अब इस बारे में गुरूबाणी और सिख इतिहास के प्रमाण भी लिखते हैं:—

तित घीये होम जग सद पूजा, पइयै कारज सोहै ।

(वार माझ म० १)

अर्थात— इस घी से हवन यज्ञ और पवित्र पूजा के कार्य शोभा पाते हैं ।

होम जग उरध तप पूजा ॥ कोटि तीर्थ इसनान करीजा ॥
चरण कमल निमख रिदै धारे ॥
गोबिन्द जपत सभि कारज सारे ॥६॥
(प्रभाती म० ५)

अर्थात—ऊंचे और पवित्र हवन यज्ञ, तप, पूजा, करोड़ों तीर्थ स्नान आदि शुभ कर्म करे। परन्तु हृदय में सदा प्रभु प्रेम धारण करे। प्रभु स्मरण करता हुआ ही सारे पवित्र कर्मों को पूर्ण करे।

भाई गुरु दास जी अपनी इकतालीसवीं वार में लिखते हैं कि:—

निज फते बुलाई सति गुरू, कीनो उज्यारा।
झूठ कपट सभ छुप गए, सब सच वरतारा।
फिर जग होम ठहराये कर निज़ धर्म संवारा
तुर्क दुन्द सभ उठ गयो, रचियो जैकारा ॥१८॥

अर्थात—दशम गुरु जी ने अपनी विजय की घोषणा की, अन्धेर गर्दी को मिटा कर न्याय का उजाला किया, झूठ और कपट छुप गया, सत्य का बोल बाला हो गया, हवन यज्ञ का फिर प्रचार हुआ जिस से जनता ने अपने धर्म को संवार लिया, मुसलमानों का अत्याचार बन्द हो गया, धर्म जैकारा गूंज उठा।

इसी प्रकार भाई गुर्दास जी ने चोथी वार में लिखा कि:—

घी ते होवन होम जग, ढंग सुआरथ चज अचारा ॥
(वार ४ श्लोक पद ८)

अर्थात— घी से हवन यज्ञ, पर्व, शुभ कार्य और सदाचार सम्बन्धी पवित्र कर्म होते हैं।

चीफ खालसा दीवान के प्रसिद्ध उपदेशक भाई हरनाम सिंह जी "सच्ची मुहबत" नामी पुस्तक में लिखते हैं कि:—

यज्ञ होम होवना न हिन्द में कोइ मूल पाता,
भूलते निशान नहीं आज हिन्दुवान के,
कहत हरनाम सिंह इस में न झूठ जानो,
तीर जो न छूटते गोबिन्द सिंह जुवान के।

अर्थात—इस में कुछ भी शक नहीं कि यदि गुरु गोबिन्द सिंह जी जैसे वीर योद्धा के तीरों की वर्षा न होती तो भारत देश में हवन यज्ञ न हो पाते और हिन्दु धर्म के झन्डे न झूलते।

इसी प्रकार नामधारी सिखों के नित्य नियम गुटके में लिखा है कि "साहिब गुरु गोबिन्द सिंह जी की हवन यज्ञ के साथ ऐसी प्रीति थी कि आप जी ने सवा लाख दमड़े की सामग्री इकत्र करके नैना देवी के मन्दिर में हवन किया था।"

जब प० केशव दास जी ने हवन करने सम्बन्धी श्री गुरु जी को कहा तो आप जी ने अपनी सम्मति इस प्रकार पन्थ प्रकाश निवास २५ में लिखी।

एह तो धर्म हमारा सार, करत रहे नृप मुनि अवतार।
सो तो हम भी करना चाहें, जा ते सब सृष्टि सुख पाए।
एकतो है दुर्भिक्ष अति भारी, है पड़ रहयो न बरसत बारी
दूसर भारत वर्ष मंझारे, महा मरी पड़ रही आपारे।
तृतिये जो नर नारी आरज, हो रहे निज धर्मों खारज।
पाप कुकर्मन में अति लागे, इस हेतु बन रहे अभागे।

यज्ञ होम लों सुकृत जे हैं, जालम तुर्क करन नहीं दे है ।
जब हम हवन यज्ञ करवै हैं, खुश हो घन जल बहु बरसे हैं ।
दुर्भिक्ष नसे अन्न बहु थै हैं, सुकृत सब करने लग जै हैं ।
नसे अविद्या विद्या अई है, शूरवीरता दृढ़ प्रगटई है ।
वर्ण आगामी जन हैं जेते, कायरता कर पूर्ण तेते ।
उन्हें हवन की पवन लगे जब, शेर बिघाड़न से होईये सब ।
शूर वीरता उर में जगे है, धर्म पुरातन करने लगे है ।
प्रभुता देह आरोग्य कांति, विजय ज्ञान संतति सुख दाती,
निर्भयता जस गुण दैवी सब, होय है प्राप्त गरु घर में तब ।
बालक भाग्यवान प्रगटे हैं, रोग शीतला आदि नसे हैं ।
कामादि जो आसुरी सम्पति, होम यज्ञ को लख कर कम्पति।
उत्तम गुण सत्यादिक जे हैं, बावन कहे वेद ऋग में हैं।
सो अवश्य जग में प्रगटे हैं, होम यज्ञ विधि वत जब थै हैं

अर्थात्-हे पन्डित जी, हवन यज्ञ तो हमारे धर्म का सार है, इस को तो राजे महाराजे ऋषि मुनि और अवतार करते चले आये हैं, इस लिये हम भी इस को करना चाहते हैं। ताकि इस के करने से सारे संसार को सुख हो, एक तो भारी अकाल पड़ रहा है, वर्षा हुई नहीं, दूसरे देश में रोग फैल रहा है, तीसरा जो स्त्री पुरुष आर्य धर्म से विमुख हो रहे हैं, अर्थात् पाप कर्म में लग रहे, और अभागे बन रहे हैं । मुसलमान हाकम यज्ञादि शुभ कर्मों को करने भी नहीं देते ।

हम जब हवन यज्ञ करेंगे तो फल यह होगा कि बादल

प्रसन्न होकर जल बरसावेंगे, अकाल नहीं रहेगा, अन्न अधिक उत्पन्न होगा, जनता शुभ कर्म करने लगेगी, अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि होगी, शूरवीरता आयेगी, वर्ण आश्रमी जो कायर बन रहे हैं उन को जब हवन की वायु लगेगी, तो शेरों की तरह शक्ति शाली होंगे, उनके हृदय में शूरवीरता उत्पन्न होगी, तब प्राचीन धर्म को करने लगेंगे, इनमें प्रभुता, अरोग्यता, क्रांति, विजय का ज्ञान और उत्तम संतान उत्पन्न होगी। निर्भयता यश और सब दैवी गुण गुरु घर में आ जायेंगे। भाग्यवान बालक जन्म लेंगे, शीतलादि रोग नष्ट होंगे, काम क्रोधादि आसुरी भाव हवन यज्ञ को देख कांपने लगेंगे, सत्य धर्म आदि बावन प्रकार के गुण जो ऋग्वेद में लिखे हैं वह अवश्य ही जगत में आवेंगे, जबकि हम विधिवत हवन यज्ञ करेंगे।

प्यारे पाठक गण! यह हवन यज्ञ कई मास तक होता रहा, पण्डित केशो दास इस के ब्रह्मा थे और कई ब्राह्मण यज्ञ के सहायक थे। गुरु जी यज्ञमान (होता) थे। जब यज्ञ पूर्ण हुआ तो जनता में बड़ा उत्साह था और इस यज्ञ का उत्तम फल निकला।

पं० केशो दास जी ने उस समय कहा कि:—

आप हवन के लाभ जो गाये,
हुए अवश्यमेव सब भाये।
परोपकार जगत पर भारी,
हुआ आप का यज्ञ सुखकारी।

(पन्थ प्रकाश)

ज्ञानी ज्ञान सिंह जी लिखते हैं कि सतलुज नदी के तट पर गुरु के बाग में एक सुन्दर जगह देख कर यह इतिहासिक

यज्ञ होने लगा। चैत्र मास स० १७५४ के नवरात्रों में शुभ लगन हवन आरम्भ किया गया। भारी सामग्री के साथ घी की धार परनाले की भांति हवन कुन्ड में पड़ती थी, चार मास तक हवन होता रहा तब बड़ी वर्षा हुई। (पन्थ प्रकाश निवास २६)

तब गुरू सर्व सामग्री, हवन कुन्ड के माहीं।
एक ही वेर जब पावसी, चानण भए महा ही।

श्रीमान सन्त निधान सिंह जी आलम ने एक पुस्तक "हवन प्रकाश" नामी लिखी है, जिस में वह लिखते हैं कि श्री सतगुरु राम सिंह जी ने अपने धर्म प्रचार के प्रोग्राम में यज्ञ हवन को विशेष रूप दिया है। हर दीवान की समाप्ति पर हवन किया जाता है :—

हवन की रीति जो सतगुरु राम सिंह जी ने उच्चारण की है, वह इस प्रकार है।

"पहले चौका देकर फिर हवन कुन्ड में समिधा पलास की या बेरी की हों। हवन की अग्नि को फूंक न दी जाय, पंखे से प्रज्वलत की जाये। पांच सिख पोथियों से वाणी का पाठ करें। चौपई जपजी, जाप साहिब, चन्डी की वार, उग्रदन्ती, चन्डी-चरित्र, अकाल स्तुति से छटा सिख आहुतियां डाले।"

ऊपरोक्त प्रमाणों से साफ सिद्ध है, कि दसों सिख गुरु हवन यज्ञ या देव यज्ञ को धर्म का अंग मानते थे, जैसा कि प्राचीन ऋषि।

अतिथि यज्ञ या साधु सेवा

अतिथि या साधु पुरुष उसे कहते हैं कि जिस के आने की कोई तिथि निश्चित न हो, जो धार्मिक, सत्योपदेशक, उपकारार्थ घूमने वाला पूर्ण विद्वान साधु हो, उस सन्यासी की अन्नादि से सेवा, उन से प्रश्नोत्तर आदि करके विद्या प्राप्त करना "अतिथि यज्ञ" कहाता है। परन्तु जो पाखन्डी, वेद निन्दक, पापाचरण करने हारा, जैसे बिल्ली छिप कर चुहों का शिकार कर अपना पेट भरती है, जो हठी दुराग्रही, अभिमानी, आप जाने नहीं औरों का कहा माने नहीं, जैसे बगुला एक पैर पर खड़ा हो झट मछली के प्राण हर के अपना स्वार्थसिद्ध करता है। जैसे कि आज कल के वैरागी, खाकी, भेष धारी साधु हैं। ऐसों का सत्कार वाणी मात्र से भी न करना चाहिए। क्योंकि यह आप तो डूबे ही हैं साथ में सेवक को भी अविद्या रूपी महासागर में डुबाते हैं। इस लिये धर्म से प्राप्त हुए धन का, कुपात्र को जो दान देना है वह दान दाता का नाश इसी जन्म में और लेने वाले का नाश अगले जन्म मे करता है।

हमारे सिख भाई अरदास करते हुए कहा करते हैं:—

"साधु का संग गुरुमुख का मेल"

गुरुवाणी में भी कहा है:—

सच्ची संगति सच्चि मिलै, सच्चै नाय प्यार।

(वार वडहंस म० ३)

सत्य पुरुषों के सत्संग से सत्य ज्ञान की प्राप्ति होती है और

प्रभु के सच्चे नाम से प्यार उत्पन्न होता है।

भलके उठ प्राहुना मेरै घर आवो ॥
पांव पखाला तिसी के, मन तन नित्य भावो ॥
नाम सुने नाम संग्रहै, नामे लिव लावो ॥
ग्रह धन सब पवित्र होई, हरि के गुण गावो ॥
हरि नाम वापारी नानका, वडभागी पावो ॥ २ ॥
(गौड़ी की वार म० ५)

अर्थात्—क्या ही अच्छा हो कि प्रातः काल ही अतिथि मेरे घर आ जाय तो मैं उस के चरण धोऊं, और तन मन से सेवा करूं, प्रभु नाम और सत्योपदेश सुन शुभ गुणों का संग्रह करूं। नाम में लिव लगाऊं। मेरा घर और धन पवित्र और सफल हो जाए, मैं प्रभु के गुण गान करूं, साधु जो प्रभु नाम के व्यापारी हैं उत्तम भाग्य से प्राप्त होते हैं।

परन्तु अज्ञानी लोगों ने साधु भक्ति और पूजा को इतना बढ़ावा दिया कि आप ही ब्रह्म बन बैठे और लगे गुरबाणी के प्रमाण देने कि:—

संतन मोको पूंजी सौंपी, तो उतरिया मन का धोखा।
धर्म राये अब कहा करै गो, जो फाटियो सगलो लेखा ॥३॥
महा अनन्द भये सुख पाइया, संतन कै परसादे।
कहो नानक हरि स्यों मनमानिया, रंग रते विसमादे ॥४॥
(सोरठ म० ५)

अर्थात—संतो ने मुझे ऐसी पूंजी दे दी, ऐसा गुरु मन्त्र कान में फूंका, कि मेरे मन का धोका डर सब उतर गया, अब धर्म राज या परमात्मा मेरा क्या बिगाड सकेगा ? जब कि गुरू संत जी महाराज ने हिसाब किताब का कागज ही फाड़दिया, अब तो महान आनन्द है, संत प्रसाद या कृपा से सुख ही सुख है। नानक जी कहते हैं कि इस ढंग से प्रभु से मन लगा, आश्चर्य जनक रंग चढ़ा।

कई नाम के संत ऐसे २ शब्दों के मन माने अर्थ करके भोले भाले लोगों को अपने माया जाल में फंसा लेते हैं। ज्ञानी शेर सिंह जी ने नित्य नेम का टीका करते हुए इस को खतरे की घंटी लिखा है। जब यह पाखन्डी समझते हैं कि हमारे चेले चेलियां हमारी बात में आ जाते हैं तो उनको इस प्रकार के शब्द और अर्थ सुना उन से हर प्रकार की धर्म विरुद्ध सेवा भी लेने लग जाते हैं। जैसा कि:—

चरन साध के धोये धोये पियो, अरपि साध को अपना जीओ ॥

(गौड़ी सुखमनी म० ५)

अर्थात—चेली चेले अपना शरीर तक साधु को अर्प दें। प्रि० जोध सिंह जी एम ए० लिखते है कि कई लोग कह दिया करते हैं कि महाराज ! भेख को नमस्कार है चाहे गवे पर भी भगवे रंग की झूल पड़ी हो तो उस को भी माथा टेक दो। गुरु मत ऐसे विचारों की पुष्टि नहीं करता। गुरु नानक जी का वचन है कि:—

घोली गेरू रंग चढ़ाइया वस्त्र भेख भेखारी ॥

कापड़ फार बनाई खिन्था, झोली माइया धारी ।।
घर घर मांगे जग प्रबोधै, मन अन्धै पत हारी ॥
भरमि भुलाना सबद न चीनै, जुए बाजी हारी ॥२॥

(मारू म० १)

अर्थात—भेख धारी पाखन्डी साधु ने गेरू रंग घोल लिया और कपड़े रंग लिये, एक कपड़े की झोली बना ली, लगा घर घर मांगने और संसार को ठगने। मन के अंधे अज्ञानी ने बहु-रूपिया बन कर अपना मान घटा लिया। भ्रम में भटका हुआ ईश्वर ज्ञान शब्द या वेद को नहीं जानता ऐसे नाम धारी साधु ने मानो जुए में जन्म हार दिया।

इस से सिद्ध है कि सिख गुरू अतिथि यज्ञ या साधु सेवा को पुण्य कर्म और पाखन्ड को पाप कर्म मानते और ठग भिखमंगों का खन्डन करते थे।

पितृ यज्ञ या श्राद्ध तर्पण

जिस से देव जो विद्वान, ऋषि जो पढ़ने पढ़ाने हारे पितर जो माता पिता आदि वृद्ध ज्ञानी और परम योगियों की सेवा करनी, इस को पितृ यज्ञ कहते हैं।

परन्तु यह जीवितों के लिये है मृतकों के लिये नहीं। इसी के दो भेद हैं एक श्राद्ध और दूसरा तर्पण अपने माता पिता, दादा दादी, नाना नानी, या अपनी स्त्री या भगिनी सम्बन्धी और एक गोत्र के तथा अन्य कोई भद्र पुरुष या वृद्ध हो, उन सब को अत्यन्त श्रद्धा से उत्तम अन्न सुन्दर यान आदि देकर अच्छे

प्रकार जो तृप्त करना है अर्थात जिस २ कर्म से उनका आत्मा तृप्त और शरीर स्वस्थ रहे उस २ कर्म से प्रीति पूर्वक उन की सेवा करनी श्राद्ध और तर्पण कहाता है।

परन्तु कुछ भाई मृतक माता पिता आदि का श्राद्ध ब्राह्मणों को भोजन करा कर इन के द्वारा पितरों को इस पदार्थ के पहुँचाने का नाम श्राद्ध कहते हैं जो ठीक नहीं।

अब देखना चाहिए कि पितर संज्ञा किस की है। यदि शरीर की मानी जावे तो वह भस्म हो गया और यदि आत्मा की मानें तो उसका कोई लिंग ही नहीं, न वह स्त्री है न पुरुष, यह कभी पिता बनता है कभी पुत्र और पुनर्जन्म का चक्कर सदा से चल र हा है, यह किस २ का माता पिता कहलायेगा। इस से सिद्ध है कि शरीर सहित आत्मा ही पिता पुत्र आदि था। मरने के बाद तो वह सम्बन्ध टूट गया, इस लिए मृतक श्राद्ध ठीक नहीं।

दूसरा यदि ब्राह्मण को खिलाया हुआ मृतक को पहुंचता है तो ब्राह्मण के खाने के बाद तुरन्त भूख लग जानी चाहिए। फिर तो हर देश गये माता पिता को भी पहुँच जाना चाहिए।

तीसरे श्राद्ध के दिनों मे बहुत सारे मनुष्यों का बिना खाये ही पेट भरना चाहिए, क्योंकि पिछले जन्म के पुत्रों ने उन का श्राद्ध भी किया होगा, परन्तु ऐसा होता नहीं।

चौथा यदि एक समय में किसी पितर के चार पुत्र अलग २ शहरों में रहते हुए श्राद्ध करें तो वह कहां २ जायेगा।

पांचवां श्राद्ध में या तो ब्राह्मण पितरों को झूठा खिलायेगा या आप उन का झूठा खायगा तो दोनों प्रकार से पाप है।

गुरु वाणी में भी लिखा है कि :—

आया गया मोया नाओं, पिछै पतल सदिया कोव ॥
नानक मन मुख अन्ध प्यार ॥ बाझ गुरु डुबा संसार ॥ २ ॥
(वार माझ म० १)

जीवित पितर न मानै कोऊ, मुए सिराध कराही ॥
पितर भी बपुरे कहो क्यों पावै, कौवा कूकर खाही ॥ १ ॥
(राग गौड़ी कबीर)

परन्तु आज बहुत से गुरु सिख मृतक पितरों का श्राद्ध करते दिखाई देते हैं। इस से भी बढ़कर असूज वदि दशमी को जब कि गुरु नानक देव जी ज्योति जोत समाये थे अच्छे २ बुद्धिमान सिखों को गुरु नानक देव जी का श्राद्ध करते देखा गया है, जब कि गुरु नानक देव जी ने हरिद्वार में गंगा जल को उलटी दशा में उछाल कर अज्ञानियों को यह उपदेश दिया था कि यदि तुम्हारा दिया हुआ जल परलोक में पितरों को पहुँच सकता है तो मेरा यह जल करतारपुर में मेरे खेतों को भी पहुँच जावेगा। (जन्म साखी),

मांस शराब नशे खन्डन

मनुष्यपन इसी में है कि हम पाप की कमाई से अपना पेट न भरें। उस की प्रजा रूपी प्राणियों को दुःख देकर उन के प्राण लेकर या किसी का अधिकार छीन कर या चोरी ठग्गी आदि पाप कर्मों से पेट की आग को न बुझायें। न ही बुद्धि के नाश करने वाले तामसिक पदार्थों का सेवन करें। हमारा आहार सात्विक हो, जिस को खा कर संयम पूर्वक सादा और स्वस्थ

जीवन व्यतीत करें। चूंकि मांस शराब और दूसरे सब नशों का सेवन करनो पाप, अधर्म और तमोगुण उत्पन्न करने वाला है, अतः इन का कभी सेवन न करें प्राचीन वैदिक ऋषियों का आशय भी यही है कि मनुष्य शुभ कर्म करता हुआ कम से कम सौ वर्ष तक सुख पूर्वक जीने की। रेक छिच्छ

गुरू अर्जुन देव जी ने भी साधु पुरुषों का यही लक्षण बताया है कि:—

कोटि पतित जाकै संगि उधार ॥ एक निरंकार जाकै नाम अधार ॥
सर्ब जियां का जानै भेओ ॥ कृपा निधान निरंजन देओ ॥३॥
(गोड़ी म० ५)

अर्थात– साधु पुरुष वह है जो करोड़ों गिरे हुओं पतितों का उधार करता है और लाखों पापियों को सन्मार्ग पर लाता है एक परमात्मा को अपना मित्र और आधार मानता है प्राणीमात्र से प्रेम करता है, जो सब पर कृपा करता और निर्लोभ है।

ना को वैरी नहीं बिगाना, सगल संग हम को बन आई ॥
(कानड़ा म० ५)

परन्तु दुःख की बात है कि सिखों के नेता और उपदेशक मांस शराब आदि नशों का खुला सेवन और प्रचार करने लग गए हैं। मांस को महा प्रसाद और जीवों का झटका (मारना) धर्म का अंग मानने लग गए है।

जबकि भाई गुरू दास जी ने भी वारों में लिखा कि:—

आन महां परशाद वन्ड खुवाया ॥१०॥ (वार २०)

फुट नोट में महां प्रसाद का अर्थ उत्तम कड़ाह प्रसाद

(मोहन भोग) लिखा है।

प्रश्नः—पुण्य और पाप या धर्म और अधर्म किसको कहते हैं ?

उत्तरः—वेद, शास्त्र, गुरु वाणी अनुसार किसी प्राणी को मन, वाणी और शरीर से सुख देने का नाम धर्म या पुण्य और इस के विरुद्ध दुःख देने का नाम पाप और अधर्म हैं।

प्रश्नः—जब आप यह मानते हैं कि मनुष्य योनि सब से उत्तम है और शेष सब प्राणी इस के ऋणि और सेवादार हैं, तो फिर मनुष्यांका यह अधिकार हैं कि उनसे जैसा चाहे लाभ लें ?

उत्तर—वेद की आज्ञा है कि जिस प्राणी से मनुष्य काम या सेवा ले उस के अनुसार उस को पूरी आयु तक जीने दे और उस के भोग या जीवन निर्वाह में किसी प्रकार की कमी रुकावट न डाले बलकि खान पान आदि में उस की पूरी सहायता करे। जो लोग दूसरे प्राणियों को दुःख देते या मारते हैं वह तो प्रभु के न्याय नियम को तोड़ते हैं, इस लिये ऐसे मनुष्य पापी और अधर्मी हैं।

प्रश्नः—घातक या मांसाहारी तो कहते हैं कि जिन प्राणियों को हम मारते हैं, उन को जीवन के दुःखों सें छुड़ा कर स्वर्ग में पहुंचा देते है ?

उत्तरः—यदि इन मांसाहारियों या घातका से कोई कहे कि आओ। हम भी तुम्हारी इसी प्रकार गति कर देते है या मार कर स्वर्ग में पहुंचा देते हैं तो क्या वह इस बात को मान लेंगे ?

यदि कहो कि नहीं, तो वह अपनी गति क्यों नहीं कराते या स्वर्ग में क्यों नहीं जाते ?

प्रश्नः—गऊ को छोड़ जितने भी प्राणी भेड़ बकरी मछली आदि हैं यह सब परमात्मा ने मनुष्यों के खाने के लिए बनाए हैं।

उत्तरः—इस बात का आप के पास क्या प्रमाण है कि यह सब प्राणी मनुष्य के खाने के लिए बनाए गए है ? इस प्रकार तो यह भी कहा जा सकता है कि सारे मनुष्य शेर चीते आदि मांसाहारी पशुओं के खाने के लिये बनाए गए हैं।

प्रश्नः—कई देश ऐसे भी हैं, जहां के निवासी मनुष्य केवल मांस पर गुजारा करते हैं क्योंकि उस देश में साग, सबजी, फल अन्न आदि मिलता ही नहीं।

उत्तरः—तुम तो पवित्र भारत वासी हो जहां अन्न, फल सबजी दूध आदि खाने को मिलता है।

प्रश्नः—हम तो उन दूसरे देश वालों के सम्बन्ध में पूछते हैं।

उत्तरः—तुम अपनी बात छोड़ कर बिना प्रयोजन दूसरों के सम्बन्ध में पूछते हो, तो लो सुनो ! तुम यह बतलाओ कि जहां मांसाहारी लोग रहते हैं वहां पृथ्वी, जल, वृक्ष आदि हैं या नहीं ? यदि कहो कि यह चीजें वहां नहीं मिलतीं तो जिन पशु पक्षियों का मांस वह लोग खाते हैं उन का निर्वाह कैसे होता है ? जैसे आईस लैन्ड देश में रेंडियर नाम का मृग होता है ज. मांसाहारी नहीं और बर्फीनी देशमें रहता भी है। दूसरा यह सृष्टि नियम है कि जो प्राणी जिस देश में उत्पन्न होता हैं उस का आहार वहां उत्पन्न

होता है अर्थात जहां मनुष्य उत्पन्न होंगे वहां अन्न सबजी आदि उस का आहार अवश्य उत्पन्न होगा।

प्रश्नः—क्या मांसाहारियों के स्त्री, पुत्र, धन आदि नहीं होता ?

उत्तरः—स्त्री, पुत्र, धन आदि तो पापी से पापी मनुष्य के भी होता है, परन्तु यह पदार्थ कोई सुख का कारण नहीं, इन को पाकर इन से ही लोग दुःख पाते भी देखे जाते हैं। जैसे कि गोस्वामी तुलसी दास जी ने कहा भी है कि:—

सुत दारा और लक्ष्मी, पापी ग्रह भी होय।
संत समागम हरि कथा। तुलसी दुर्लभ दोये॥

अतः—धन, पुत्र,स्त्री आदि नितान्त सुख का कारण नहीं। सच्चा सुख तो प्रभु भजन ध्यान और ईश्वर भक्ति में है।

प्रश्नः—क्या मुर्गी आदि के अन्डे खाना भी पाप है ?

उत्तरः—जिस पक्षी का वह अन्डा होता है उस की हत्या के तुल्य ही अन्डे खाने में पाप है क्योंकि गर्भ गिराने का पाप भी बड़े मनुष्य की हत्या के पाप के समान होता है।

प्रश्नः—बहुत लोगों का विचार है कि अन्डे में जीव नहीं होता और अब तो ऐसी मुर्गी भी हैं जो बिना मुर्गे के सामागम के अन्डे देती है अर्थात उनमें रज वीर्य का संयोग ही नहीं होता ?

उत्तर—गर्भ के साथ ही जीव गर्भ में प्रवेश करता है अतः आत्मा अन्डेमें अवश्य होता है और खाने वालों को पाप भी अवश्य लगता है बाकी रहा केवल मुर्गी से अन्डे पैदा होंने की बात। सो उस

में मुर्गी का रज (पेशाब) तो होता ही है जो बहुत ही गन्दी वस्तु है और यही कुछ अन्डे में भरा रहता है फिर जिस को आप लोग बड़े चाव से खाते हैं।

मुर्गी आप भी कीड़े, मकौड़े, थूक, नाक और गलियों का गन्द खाती और चाटती है। अतः ऐसी वस्तु का खाना पाप ही है। अब हम गुरूवाणी के कुछ प्रमाण भी लिखते हैं जो वेदानुकूल कथन की पुष्टी करने वाले हैं:—

कलि होई कुते मुहीं, खाज होआ मुरदार ॥
कूड़ बोलि बोलि भोंकणा, चूका धर्म बीचार ॥

(सारंग की वार म० १)

अर्थात— अब तो मनुष्यों का स्वभाव कुत्तों जैसा हो गया है, क्योंकि लोग मुरदार खाने लग गए हैं। जिसको भक्षण कर झूठ बोलते, मानों कुत्तों की तरह भोंकते या बकवास करते हैं, धर्म का तो विचार ही उठ गया है।

हिंसा तो मन ते नहीं छूटी, जिया दया नहीं पाली ॥
परमानन्द साध संगति मिलि, कथा पुनीत न चाली ॥३॥

(सारंग म० ५)

अर्थात—पापी लोगों ने हिंसा या प्राणी घात नहीं छोड़ा, जीवों पर दया नहीं करते,और न हीं यह साधु संग करते, या भले पुरुषों की संगत में जो कर धर्म की पवित्र कथा ही सुनते हैं।

बेद कतेब कहो मत झूठे, झूठा जो न बिचारै ॥
जो सब में एक खुदाए कहत हो, तो क्यों मुर्गी मारै ॥१॥

(प्रभाती बानी कबीर)

अर्थात्—हे मनुष्यो! वेदादि धर्म पुस्तकों को झूठा मत कहो। झूठा तो वह है जो इन पर विचार नहीं करता, यदि सब जगह और सब में परमात्मा को व्यापक मानते हो तो फिर मुर्गादि प्राणियों को क्यों मारते हो?

कबीर, भांग, माछुली, सुरापानि जो जो प्राणी खांहि॥
तीरथ बरत नेम किये ते, सभै रसातल जांहि॥ २३॥

(श्लोक कबीर जी)

अर्थात्—जो लोग भांग, मछली आदि, नशे, मांस, शराब आदि अभक्ष्य भोजन करते हैं, उनके तीर्थ स्नान, व्रत और नित्य नियम सभी अकारथ जाते हैं।

अपने सिखों के लिये दशम गुरु की आज्ञा है कि:—

कुठा, हुक्का, चरस, तम्बाकू,
गांजा, टोपी, ताड़ी खाकू,
इनकी ओर कभी न देखे।
रहत वन्त जो सिख विशेषे॥

(रहतनामा देसासिंह)

अर्थात्—मेरे सिख जो विशेष रहत वाले हैं वह मांस चरस, तम्बाकू गांजा, चिलम, ताड़ी, शराब आदि का प्रयोग नहीं करते, वह इन गन्दी वस्तुओं की ओर आंख उठा कर भी नहीं देखते।

बकरा झटका बीच न करे, और मांस न लंगर बड़े।

अर्थात्—लंगर या रसोई घर में बकरे का मांस, झटका

तैयार न करें और न ले जाए।

अच्छे गुरु सिख मांस, शराब, तम्बाकू, भांग को भक्षण करना तो एक ओर इस अपवित्र वस्तुओं को छूते भी नहीं।

(पन्थ प्रकाश)

सब खावें लुट जहान नं, पी दारू खाऐं कबाब।

(जन्म साखी पृष्ट-१६७)

अर्थात— सब पापी मनुष्य संसार को लूट कर खाते, शराब पीते और मांसाहार करते हैं।

रोजा धरै मनावै अलाह, सुआदति जियां संघारै॥
आपा देखि अवर नहीं देखै, काहे को झख मारै॥१॥

(आसा कबीर जी)

अर्थात—हे मोमन! तू ईश्वर को रिझाने के लिये रोजा या व्रत रखता है और अपनी रसना के सुवाद के लिये जीवों का घात करता है, तू अपना स्वाद देखता पर दूसरे के दुःख को अनुभव नहीं करता और इसको धर्म समझता है। अरे! क्यों झक मारता है।

जीआ वधहु सु धर्म कर थपिहु,
अधर्म कहो कत भाई॥
आपस को मुनिवर कर थपिहु,
का को कहहु कसाई॥ २॥

(राग मारू कबीर जी)

ओ भोले मनुष्य ! प्राणी को मारना यदि तूने धर्म मान रखा है तो फिर पाप किस को कहा जायेगा ? मांसहारी बगुला भक्त यदि मुनि वर कहलाने लगें, तो कसाई किन का नाम रखोगे ?

जो करे इबादत बन्दगी, उस नू मांस न पाक ।

सभना अन्दर रम रिहया, हर दम साहिब आप ॥

(जन्म साखी पृ० २१५)

अर्थात्—ईश्वर भक्ति करने वालों के लिये हर प्रकार का मांस अपवित्र है। क्योंकि परमात्मा प्राणिमात्र में सदा और सर्व व्यापक है।

ऊपरोक्त प्रमाणों से साफ सिद्ध है कि दसों गुरू और भक्त जन जिन की वाणी गुरू ग्रन्थ साहब में दर्ज है, मांस शराब आदि के सेवन को महापाप मानते थे। गुरू वाणी में और भी अनेक प्रमाण हैं आशा है सत्य के प्रेमी सज्जन इन से ही लाभ उठायेंगे गुरू सिखों के इस विषय पर कुछ और प्रश्न और उन के उत्तर भी पढ़िये।

प्रश्न—क्या सचमुच मांस भक्षण पाप है ?

उत्तर—जब सिख गुरू, महाराज मनु के आधार पर मान रहे हैं कि बिना किसी प्राणी को मारे मांस प्राप्त नहीं होता तो मांस भक्षण पाप ही है।

प्रश्न— सारा संसार ही आज मांसाहारी है, सारे लिखे पढ़े सभ्य देश मांस खाते हैं तो क्या यह सब पापी हैं।

उत्तर—यदि किसी पाप कर्म को बहुत लोग करें, तो वह पाप कर्म पुण्य नहीं बन जाता। यदि लाखों मनुष्य चोरी करने लग जायें तो क्या यह इस लिये चोरी न होगी कि इस को बहुत लोग कहते हैं?

प्रश्न—चोरी को तो सभी बुरा मानते है मांसाहार को नहीं।

उत्तर—चोरी को इसी कारण तो बुरा समझा जाता है कि एक ने कमाई करके अपने सुख के लिये धन कमाया दूसरा उस को चुरा कर ले गया। इसी प्रकार बकरी ने चारा खा कर अपने लाभ हित मांस बनाया। मांसभक्षी ने उसको मार कर उसका मांस छीन लिया। अब आप ही बतायें कि धन चुराना बड़ा पाप है या किसी की हत्या करना। एक मनुष्य आप की जेब काटता है और दूसरा गला तो कौन आप का बड़ा शत्रु होगा?

प्रश्न—मांस शक्ति वर्धक है और खाने में मजेदार।

उत्तर—यदि यही बात शेर कहे कि मनुष्य का मांस शक्ति दायक भी है और मजेदार भी और यह कह कर आप को मार कर खाना चाहे तो आप शेर को अच्छा समझेंगे या बुरा?

प्रश्न—प्राणी को कसाई या झटकई मारता है हम तो मांस मोल लेते हैं अतः झटकई पापी है।

उत्तर—झटकई कहता है कि हम तो ग्राहक के लिये मारते हैं नाकि अपने लिये। यदि आप कुछ डाकू नौकर रख लें और वह डाका मार कर धन आप को दे दिया करे तो क्या आप दण्ड से

बच जायेंगे ?

प्रश्न — हम तो वाहिगुरू का नाम लेकर अर्थात सत श्री अकाल कह कर बकरे आदि मारते है। इस लिये वह हलाल या खाने योग्य हो जाते हैं।

उत्तर—वहिगुरू तो दयालु है अतः उस के नाम पर किया गया अत्याचार या पाप, पुण्य कर्म नहीं हो जाता। जिस प्रकार गुरू या वाहिगुरू का नाम लेकर या गुरू का दशवंध (दशवां भाग) देकर चोरी करने से चोर न्यायालय से बरी नहीं हो जाता।

प्रश्न—आप भी तो बकरी का दूध पीते हो। यदि हम उस का मांस खाते हैं तो क्या बुरा करते हैं ?

उत्तर—दूध तो माता का भी पिया जाता है। तो क्या माता को मार कर भी खा लेना योग्य है ? बकरी को चारा खिला और पाल पोस कर दूध लेना उस को मार कर खा लेने के समान नहीं।

प्रश्न—यदि मांस भक्षण छोड़ दिया जाये तो मनुष्य का निर्वाह कैसे हो ?

उत्तर—यदि मनुष्य चोरी करना छोड़ दे तो क्या परमात्मा उन को नेक कमाई करने पर आहार न देगा ? या कसाई जीवों को मारना छोड़ दे तो परमात्मा उन को भूखा मार देगा ? आप भी क्या भोली बातें करते हैं ?

वैदिक संस्कृति के तीन प्रतीक

हमारी प्राचीन संस्कृति के यह तीन प्रतीक हैं

१—ओ३म्, २—आर्य, ३—नमस्ते

यह तीनों राष्ट्रीय दृष्टि कोण से भी विशेष महत्व रखते हैं।

ओ३म्– एक ईश्वर वाद,

आर्य– गौरव भरा एक जातीय नाम,

नमस्ते– एक सार्थक राष्ट्रीय अभिवादन

इसी कारण इन तीनों को गुरू नानक जी से लेकर दशम गुरू तक दसों गुरुओं ने भी अपनाया था।

१–ओ३म्

ओ३म् को गुरुओं ने अपनी वाणि में विशेष स्थान दिया था। जिस का प्रमाण पहले वर्णन हो चुका है । उन्हों ने ओ३म् के आगे १ अङ्क लिखा था और गुरूग्रन्थ साहिब के आदि में तथा हर लेख के आरम्भ में १ ओंकार ही लिखा करते थे, गुरुओं की सिखों को आज्ञा है कि:—

ओन्म अखर सुनो बीचार, ओन्म अखर त्रिभवन सार।

(राम कली मु० १)

अर्थात–ओ३म् परमात्मा का मुख्य नाम है। इस को अर्थ सहित विचार पूर्वक सुनो क्योंकि ओ३म् अक्षर तीनों काल में तीनों लोकों का सार और आधार है।

२–आर्य

मनुष्य-सृष्टि उत्पन्न होने पर, एक मनुष्य जाति ही थी पश्चात् आर्य और दस्यु यह दो भेद हुए। चारों वेदों, सत्य

शास्त्रों, मनुादि स्मृतियों, रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों में आर्य शब्द निम्न अर्थों में आया है। श्रेष्ट, विद्वान, धर्मात्मा, परोपकारी, सर्व हितकारी, ईश्वर आज्ञा पालक, नेक, धार्मिक, मान योग्य मित्र, अच्छी कुल वाला, उत्तम, बुद्धिमान, प्रिय पुरुष, पूज्य, न्याय प्रिय, धर्म शील आदि।

ऋग वेद में लिखा है कि:

हे मनुष्यो! तुम आर्य अर्थात नेक और दस्यु अर्थात बुरे आदमी में भेद समझो। मनु महाराज ने लिखा है कि आर्य वह है, जो करने योग्य उत्तम कर्मों को करता है और न करने योग्य पाप या बुरे कर्मों को नहीं करता।

इसी प्रकार महाभारत में लिखा है कि:—

जो कभी किसी से शत्रुता नहीं करता, सदा शांत चित, अहंकार रहित रहता है, कभी पतन की ओर नहीं जाता, दुःख में पड़ कर भी बुरे काम नहीं करता उस को आर्य स्वभाव वाला कहते हैं। और जो अपने ही सुख में संतुष्ट नहीं होता और दूसरों को दुखी देख कर प्रसन्न नहीं होता, वही भला मनुष्य आर्य कहलाता है। इस लिये हे भारत सपूतो! सच्चे आर्य बनो, शुभ कर्म करते हुए अपने देश, जाति और कुल का नाम उज्जवल करो।

आर्य वीर का नाद

आर्य हमारा नाम है, सत्य हमारा कर्म।
ओ३म् हमारा देव है, वेद हमारा धर्म॥

हमारी जाति का नाम अतीत काल से आर्य रहा है। आर्यों से आवर्त होने के कारण ही इस देश का नाम आर्यवर्त पड़ा। आर्य और आर्य वर्त्त दोनों ही नाम हमारे प्राचीन गौरव एवं मर्यादा की स्मृति दिलाते हैं। अतः अब समय है कि हम आर्य पद के महत्व एवं गौरव को अनुभव करें और तंग दिली को छोड़ ऊपर उठें। अपने प्राचीन आर्य नाम को अपनायें और हठ और दुराग्रह का परित्याग करें। जैसा कि आज से पांच सौ वर्ष पहले सिख गुरुओं ने इस को आनाया था।

एकु पिता एकस के हम बारिक

(सोरठ म० ५)

अर्थात-हम सब मनुष्य एक पिता की पवित्र और नेक आर्य सन्तान हैं। इसी प्रकार दशम गुरू गोबिन्द सिंह जी ने अपने सिखों को यह उपदेश दिया था कि:—

जो तुम सिख हमारे आरज, देवो सीस धर्म के कारज

(पन्थ प्रकाश कृत ज्ञानी ज्ञान सिंह)

अर्थात-यदि तुम मेरे श्रेष्ट (आर्य) सिख हो तो अपना (सीस) जीवन वेदोक्त धर्म के कार्य में लगाओ।

तृतिये जो नर नारी आरज, हो रहे निज धर्मों खारज।
पाप कुकर्मन में अति लागे, इस हेतु हो रहे अभागे॥

(पन्थ प्रकाश)

यह शब्द दशम गुरूजी ने जब बड़ा यज्ञ किया था तो कहे थे। उन का पूरा शब्द तो हवन के प्रकरण में दिया गया है अर्थात-जो आर्य नर नारी इस समय वेद धर्म को छोड़ पाप कर्मों में लग

सन्दर्भ पुस्त
परिग्रहण क्रमांक ... 5108
दयानन्द महिला महावि

बन्दगी, तस्लीम, आदाब अर्ज, गुडमानिंग, गुडईविनिंग, गुडनाईट आदि। इसको हम उदारता कहें या दासता ? हमें तो इसमें दासपँन ही दीखता है।

गुरू ग्रन्थ साहब में अनेक जगह नमः और नमस्ते द्वारा अभिवादन किया गया है जैसा कि:—

आदि गुरए नमह ।। जुगादि गुरए नमह ।।

(राग गौड़ी सुखमनि म० ५)

हरे नमस्ते, हरे नमः (राग गौड़ी नाम देव)

अब गुरू गोबिन्द सिंह जी के दशम ग्रन्थ के कुछ शब्द इस प्रकार हैं:—

नमस्ते अजाते, नमस्ते अपाते (जाप साहिब)

इसी प्रकार गुरू जी ने नमस्ते शब्द अठानवें (९८) और नमः शब्द १०८ बार जाप साहिब में लिखा अर्थात् दो सौ छे (२०६) बार लिख कर अपनी वैदिक संस्कृति की भक्ति का पूरा प्रमाण दिया है।

अतः शिक्षित समाज का कर्तव्य है कि वह इन सार्थक तथा सरल तीनों प्रतीकों को व्यापक रूप में अपना कर राष्ट्रीय एकता के पद पर आसीन करने का पूर्ण प्रयत्न करें।

संक्षेप से

हमारा मुख्य प्रयोजन है कि विरोध को छोड़ सत्यासत्य का निर्णय हो। मनुष्य जन्म इसी लिये है न कि वाद विवाद